चन्दामामा
अक्तूबर १९७०
75 P

for personal or Official Stationery

CHANDAMAMA PRESS

VADAPALANI :: MADRAS-26.

OFFERS YOU

FINEST PRINTING

EQUIPPED WITH

PHOTO GRAVURE

KLIMSCH CAMERA

VARIO KLISCHOGRAPH

BLOCK MAKING

AND A HOST OF OTHERS...

लज़्ज़तदार
मज़ेदार
ठंडा मीठा
पारले
एक्स्ट्रा-स्ट्राँग
पिपरमिण्ट
एक पैकेट में ९ पिपरमिण्ट—
कितनी कम कीमत पर!
मज़ेदार तरोताज़ा—
तरोताज़ा मज़ेदार
Gold Star
Peppermint
PARLE
everest/981/PP hin

चन्दामामा

अक्तूबर १९७०

नुसेकोस
प्लास्टिकले

बच्चों के लिये एक खिलौने बनाने का अद्भुत रंग बिरंगा मसाला जो बार-बार काम में लाया जा सकता है। १२ आकर्षक रंगों में सर्वत्र प्राप्य है।

नर्सरी स्कूल व होम इक्विपमैन्ट कम्पनी
पोस्ट बाक्स नं १४१६, दिल्ली-६

दाँत निकलते समय
बच्चों के लिये
स्वास्थ्यप्रद पेय...

डाबर ग्राइप वाटर

GRIPE
WATER

GRIPE
WATER
ग्राइप वाटर

दाँत निकलते समय आमतौर से बच्चे पेट सम्बन्धी अनेक रोगों से पीड़ित हो जाते हैं। डाबर ग्राइप वाटर पेट की तमाम तकलीफ़ों को दूर करने की एक परीक्षित दवा है। स्वादिष्ट होने के कारण बच्चे इसे बड़े प्रेम से पीते हैं। आज ही से आप भी अपने बच्चों को इस्तेमाल करायें।

डाबर (डा० एस० के० वर्म्मन) प्राइवेट लिमिटेड, कलकत्ता-२६

चूइंग गम चबाने में अब
कुछ और ही मज़ा
आता है!
चिक्लेट्स
चूइंग गम
ADAMS
TUTTI-FRUTTI
Chiclets
12 PIECES
६० पैसे में १२
चिक्लेट्स अब एक नये स्वाद
में भी मिलने लगा है:
टूटी-फ्रूटी!
लज्जतदार चिक्लेट्स
चूइंग गम—
आज ही लीजिए!
पेपरमिण्ट के स्वाद में
भी मिलता है:
६० पैसे में १२
१० पैसे में २
एडम्स का उत्कृष्ट उत्पादन
WH.1426
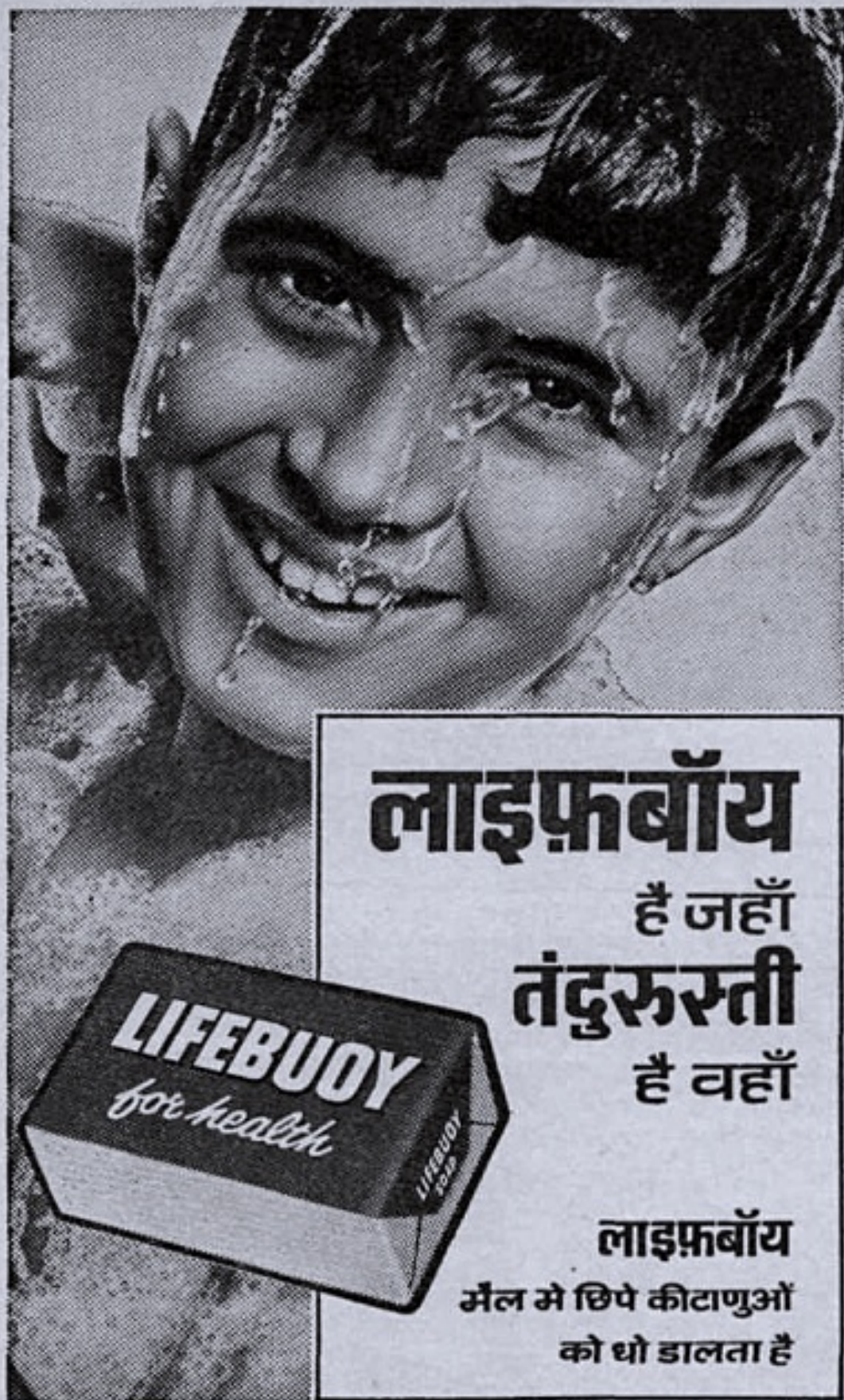
लाइफ़बॉय
है जहाँ
तंदुरुस्ती
है वहाँ
LIFEBUOY
for health
लाइफ़बॉय
मैल मे छिपे कीटाणुओं
को धो डालता है
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन
लिंटास- L. 60-77 HI

Colour Printing

By Letterpress...

...Its B. N. K's., superb printing that makes all the difference. Its printing experience of over 30 years is at the back of this press superbly equipped with modern machineries and technicians of highest calibre.

B. N. K. PRESS
PRIVATE LIMITED,
CHANDAMAMA BUILDINGS,
MADRAS-26.

GOLD SPOT

जी भर के जियो... गोल्ड स्पॉट पियो!

जीवन को उल्लसित करने वाला गोल्ड स्पॉट–इसका स्वाद कितना मधुर व मजेदार है। इसकी चुस्की लेते ही आप मस्ती में झूम उठेंगे और मन तरंगित होने लगेगा।

जी भर के जियो... गोल्ड स्पॉट पियो!

गोल्ड स्पॉट यानी ताज़ा स्वाद

mcm/pb/15b

यह उपहार
जीवन भर की मौज़ बहार

Agfa® क्लिक III

रु. ४६.५० (कर अतिरिक्त)

शुरू करने के लिए उत्तम, साथ देने में सर्वोत्तम!

अपने बच्चों को फोटोग्राफी के चमत्कार दिखाइए। उनके हाथों में क्लिक III दीजिए और शौक़ पैदा कीजिए फोटोग्राफी का! देखिए, कितनी सरलता से फोटो खींच सकते हैं इससे! किसी तरह की हेरफेर की जरूरत नहीं। बस निशाना साधिए और फोटो पर फोटो खींचते चले जाइए। जानते हैं कितना किफ़ायती है यह? हर १२० की रॉल फ़िल्म पर आप १२ रंगीन या ब्लैक एण्ड व्हाइट चमचमाती तस्वीरें खींच सकते हैं।

आग्फ़ा-गेवर्ट के सहयोग से भारत में बनानेवाले:
दि न्यू इंडिया इंडस्ट्रीज लिमिटेड, बड़ौदा.

एकमात्र वितरक:
आग्फ़ा-गेवर्ट इंडिया लिमिटेड
बंबई • नई दिल्ली • कलकत्ता • मद्रास

® यह फोटोग्राफी संबंधी उत्पादनों के निर्माता—आग्फ़ा-गेवर्ट एण्टवर्प लिवरकुसेन का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है

आग्फ़ा क्लिक—भारत का सर्वाधिक लोकप्रिय कैमरा

CMAG-138-203

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
पाठकों को यह सूचित करते हमें परम प्रसन्नता होती है कि चन्दामामा हिन्दी में ही एक लाख से अधिक प्रतियाँ बिकती है । हम मानते हैं कि यह सब हमारे प्रिय पाठकों के सहयोग का सुफल है । ज्योति पर्व दीपावली की शुभकामनाएँ देते हुए हम अपने पाठकों से यही आशा करते हैं कि आपका सहयोग हमें सदा पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा । इस पत्रिका को और लोकप्रिय बनाने में हम विद्वानों तथा पाठकों के सुझावों का सहर्ष स्वागत करेंगे ।
वर्ष : २३ अक्तूबर १९७० अंक : २
CHITRA

कंजूस

एक गाँव में शिवकरन नामक एक आदमी था। वह अपने गाँव के पास के शहर में जाकर व्यापार करता था। वह केवल रुपये कमाना जानता था, मगर खर्च करना नहीं जानता था।

शादी करने के बाद उसने शहर में परिवार के साथ रहना चाहा, लेकिन यह सोचकर वह गाँव में रह गया कि शहर में जाने से ज़्यादा खर्च होगा। वह रोज़ व्यापार के काम पर शहर आता-जाता था।

शिवकरन ने अपनी पत्नी राधा को क़िफ़ायती का पाठ पढ़ाया। वह कहा करता था, भूख मिटाने के लिए खाना है, जीभ की खुजली मिटाने के लिए नहीं। उसकी इच्छा के अनुसार उसकी पत्नी मामूली खाना बनाती। पर्व-त्योहारों के दिनों में भी पक्वान्न नहीं बनाती थी, सादा भोजन ही बनाती थी।

मगर शिवकरन की पत्नी संपन्न परिवार की युवती थी। उसने अपने मायके में सब प्रकार के पदार्थ खाये थे। अपने पति के डर से वह मामूली भोजन करते स्वाद को भी भूल बैठी थी।

राधा ने कुछ दिन बड़ी मुश्किल से काटे। अब उससे बढ़िया पदार्थ खाये बिना रहा न गया। अपने पति के शहर जाते ही वह अपनी पसंद के पदार्थ बनाकर खा लेती। जिस दिन जो चीज़ खाने की इच्छा होती, उस दिन बड़े, भज्जी, जलेबी, लड्डू कोई न कोई चीज़ बनाती, सारी चीजें खा लेती। पर यह बात अपने पति से गुप्त रखती थी। उसके पास पैसे की कोई कमी न थी। क्योंकि शिवकरन का अपनी पत्नी पर विश्वास था कि वह भी उसी की तरह क़िफ़ायत करती है, इसलिए वह सारे रुपये उसके हाथ दे देता था।

प्रभाकर चौबे

एक दिन शिवकरन अंधेरा फैलने के बाद घर लौट रहा था। पड़ोसी ने उसे देखा और अपने घर ले जाकर बोला– "आज हमने भगवान की पूजा की है, प्रसाद खाते जाओ, लेकिन हमारे घर की चीज़ें तुम्हारी पत्नी के बनाई जैसी नहीं होतीं!" यह कहते उसने शिवकरन के हाथ दो-चार जलेबियाँ रख दीं।

"मेरी पत्नी सिर्फ़ मामूली खाना बनाना जानती है, मिठाइयाँ बनाना वह बिलकुल नहीं जानती।" शिवकरन ने अचरज में आकर जवाब दिया।

"भाई साहब, यह तुम क्या कहते हो? ऐसी कोई मिठाई नहीं जो तुम्हारी पत्नी बनाना न जानती हो। रोज़ हमें तरह-तरह के पकवानों की गंध आती है। मेरी पत्नी के बनाने से ऐसी गंध कभी नहीं आती। इसलिए मैंने अपनी पत्नी से बताया कि वह जलेबी, लड्डू, भज्जी वगैरह बनाना तुम्हारी पत्नी से सीख ले।" पड़ोसी ने कहा।

"ओह ऐसी बात है!" यह कहकर शिवकरन अपने घर चला आया।

शिवकरन को अपनी पत्नी पर शक हुआ, मगर उसने अपनी पत्नी से कुछ न

पूछा। उसने खुद अपनी शंका का समाधान करना चाहा।

इसलिए दूसरे दिन वह शहर जाने का बहाना करके घर से निकल पड़ा, थोड़ी दूर चलकर फिर लौट आया। पिछवाड़े की राह से घर में प्रवेश करके एक अंधेरे कोने में छिप गया।

उस दिन राधा ने मूंग की दाल भुनाकर खीर बनायी, इसके बाद लड्डू बनाये, गली में गन्ना बिक रहा था, एक गन्ना खरीदकर उसके टुकड़े कर दिये। लड्डू खाकर खीर पी ली, गन्ने के टुकड़े खाने के बाद उसकी सीठी को इकट्ठा करके दूर फेंक दी। थालियाँ, ओखल, सब साफ़ करके घर इस तरह बनाया, मानों उसने कुछ बनाया ही न हो।

राधा अपने काम में मशगूल रही। शिवकरन चुपके से बाहर खिसक गया। अपने पैर में एक पट्टी बाँध ली, लंगड़ाते घर पहुँचा।

पति को लंगड़ाते देख राधा ने आतुरता से पूछा–"पैर में क्या हो गया है, जी?"

"और क्या हुआ? साँप ने काट खाया!" शिवकरन ने जवाब दिया।

"साँप ने काट खाया? क्या वह बड़ा साँप था?" राधा ने पूछा।

"बड़ा ही था। तुमने जितना बड़ा गन्ना खाया, उतना बड़ा! तुमने जितने बड़े लड्डू खाये, उतना मेरा पैर फूल गया है। तुमने जैसी खीर पी ली, वैसे मेरे मुँह से झाग निकला है।" शिवकरन ने समझाया।

राधा यह सोचकर डर गयी कि उसका सारा भेद खुल गया है। मगर शिवकरन ने मुस्कुराते कहा–"तुम डरो मत! गलती मेरी ही थी। भर पेट अच्छे पदार्थ न खाकर मामूली खाना खाने से क्या फ़ायदा? आज से मेरे लिए भी तुम बढ़िया पकवान बनाकर खिलाओ।"

जानवर ही भला

एक गाँव में जसवंत नामक एक किसान था। उसके यहाँ एक काली गाय और एक बछड़ा था। बछड़े को जसवंत गाय का दूध पीने नहीं देता था, इसलिए वह कुछ ही दिनों में मर गया। गाय को भी वह चारा नहीं देता था, बल्कि उसे खेतों पर छोड़ देता था। गाय शाम तक खेतों में चरती और संध्या तक घर लौटती थी।

एक दिन जसवंत की गाय घर न लौटी। खोयी हुई गाय को ढूँढ़वाने की जिम्मेदारी गाँव के मुखिये की थी। इसलिए जसवंत ने मुखिये के पास जाकर सूचित किया कि उसकी काली गाय खो गयी है।

मुखिये ने गाय को ढूँढ़ने अपने नौकरों को भेजा। वे लोग शाम तक एक काली गाय को हाँक लाये।

"क्या यही तुम्हारी गाय है?" मुखिये ने जसवंत से पूछा।

जसवंत की जो गाय खो गयी थी, वह दुबली-पतली थी, लेकिन यह गाय खूब मोटी-ताजी थी। इसलिए लोभ में पड़कर जसवंत ने कहा–"जी हाँ, यही गाय मेरी है।" मुखिये की अनुमति लेकर जसवंत उस गाय को अपने घर ले गया।

घर जाकर देखता क्या है, वह गाय दुधारू न थी। अब वह मुखिये से यह नहीं कह सकता था कि यह गाय मेरी नहीं है। इसलिए जसवंत ने उस गाय को अपने घर बाँध दिया, दाना-पानी दिये बिना उसे सुखा दिया।

जसवंत जो गाय अपने घर लाया था, वह रणधीर नामक एक दूसरे किसान की थी। रणधीर को दो दिन बाद मालूम हुआ कि उसकी गाय घर न लौटी है। उसने भी मुखिये के पास जाकर फ़रियाद की कि उसकी गाय घर न लौटी है।

आलोक तिवारी

मुखिये ने रणधीर की काली गाय को ढूंढ़ने फिर अपने नौकरों को भेजा। उन्हें कहीं गाँव की सरहद पर जसवंत की गाय दिखाई दी। नौकर उस गाय को मुखिये के पास ले आये।

"यही तुम्हारी गाय है?" मुखिये ने रणधीर से पूछा।

वह गाय दुबली-पतली थी, लेकिन दुधारू थी। रणधीर ने सोचा कि उसे खूब दाना-पानी देने से मोटी-ताजी होकर दूध देगी। यह सोचकर उसने मुखिये से कहा–"जी हाँ, यही मेरी गाय है।"

मुखिये की अनुमति लेकर रणधीर काली गाय को अपने घर ले गया। उसे खूब चारा-पानी देकर मोटा-तगड़ा बानाया। कुछ ही दिन बाद वह गाय खूब दूध देने लगी।

इस बीच जसवंत के पास रणधीर की जो गाय थी, वह सूखकर काँटा हो गयी।

कुछ दिन और बीत गये। इस बीच जसवंत को मालूम हुआ कि उसकी दुधारू गाय रणधीर के घर में है। उसने रणधीर के पास जाकर पूछा–"हमारी गायें बदल गयी हैं। मेरी दुधारू गाय तुमको और तुम्हारी सूखी गाय मुझे मिल गयी हैं। इसलिए तुम मुझे अपनी गाय देकर, तुम मेरे यहाँ से अपनी गाय को ले जाओ।"
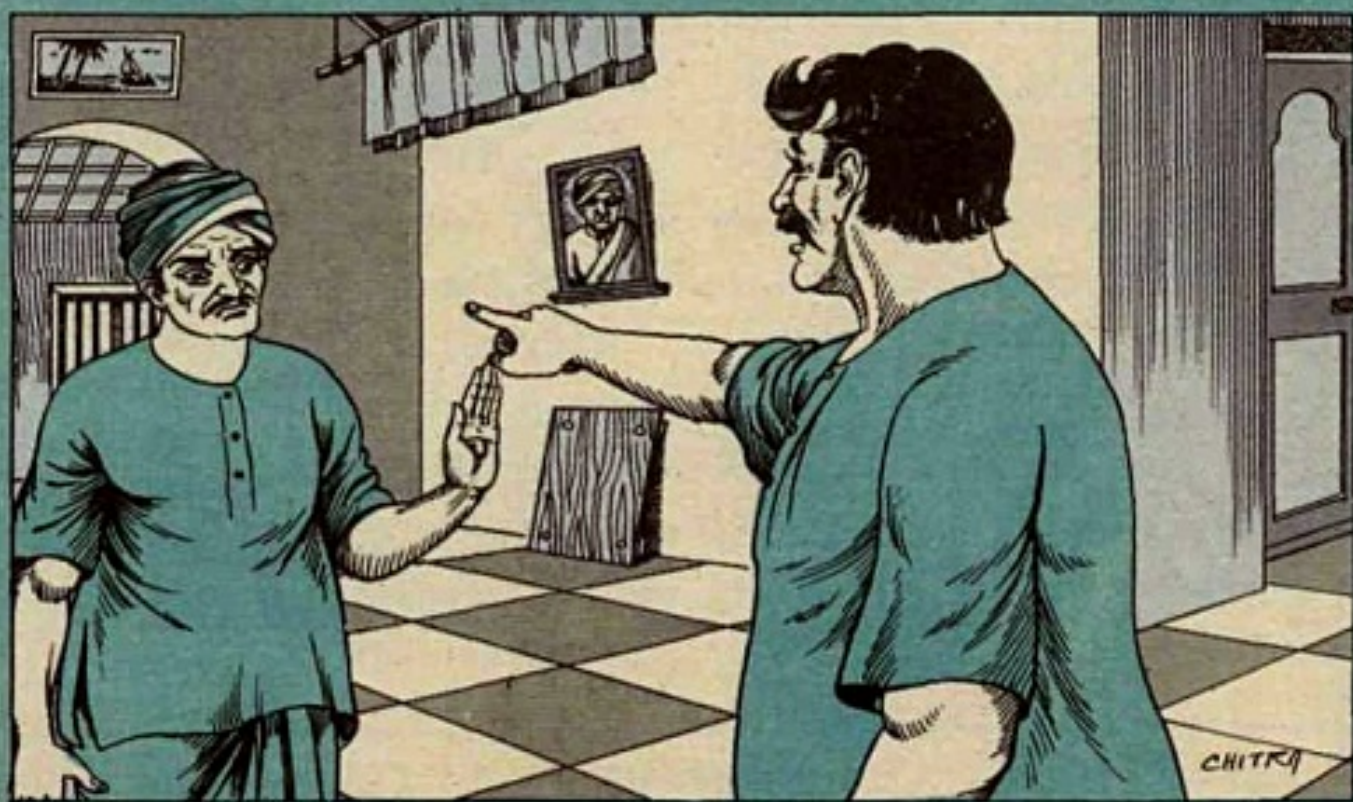
"मुखिये ने मुझे यह गाय दिलायी है, तुमको कोई आपत्ति हो तो उनसे जाकर कह दो।" रणधीर ने जवाब दिया।

जसवंत ने मुखिये के पास जाकर बिनती की–"साहब भूल से हमारी गायें बदल गयी हैं, इसलिए आप न्याय कीजिये।"

मुखिये ने दोनों गाय मँगवाकर रणधीर से पूछा–"क्या जसवंत का कहना सही है?"

इस पर रणधीर ने उत्तर दिया–"हो सकता है, उसका कहना सही हो! मगर जसवंत के पास जो गाय है, उसकी हड्डियाँ निकल आयी हैं। उसे जसवंत मोटा-ताजा बना दे तो मैं ले सकता हूँ। क्योंकि मैंने उसकी दुबली-पतली गाय को खूब दाना-पानी देकर मजबूत बनाया है।"

मुखिया जानता था कि रणधीर का कहना सत्य है। इसलिए उसने जसवंत को एक महीने की मोहलत देकर रणधीर की गाय को मोटा-तगड़ा बनाने को कहा।

लाचार होकर जसवंत महीने भर रणधीर की गाय को खिला-पिला कर ले आया।

"अब तुम अपनी गाय ले जाओ।" मुखिये ने जसवंत से कहा।

जसवंत ने जब अपनी गाय को ले जाना चाहा, तब वह नहीं आयी। इस पर उसने क्रोध में आकर उसे लाठी से मारा। गाय ने जसवंत के पेट में अपने सींग मारे।

इस पर मुखिये ने फ़ैसला किया–"जसवंत, यह गाय तुम्हारे साथ न चलेगी। हो सकता है कि यह गाय तुम्हारी हो, लेकिन यह तुमको अपना मालिक स्वीकार नहीं करती। तुमने उसे चारा न देकर उसके साथ अन्याय किया है। महीने भर से रणधीर की गाय को चारा देते हो, इसलिए वह शायद तुम्हारे साथ चल सकती है। उसके बछड़ा देने पर तुमको भी खूब दूध मिलेगा। इसलिए उसी को तुम अपने साथ ले जाओ।"

अकरुणत्व, मकारणविग्रहः, परधने, परयोषिति च स्पृहा ।
सुजन, बंधुजने ष्वसहिष्णुता प्रकृतिसिद्ध मिदं हि दुरात्मनाम् ॥ १ ॥

[दुष्टों के हृदय में दया का न होना, अकारण कलह, दूसरों की संपत्ति, पर नारियों के प्रति आसक्ति, सज्जन तथा रिश्तेदारों पर द्वेष का होना उनके सहज गुण हैं ।]

दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययालंकृतोपि सन्
मणिना भूषित स्सर्पः कि मसौ न भयंकरः ॥ २ ॥

[शिक्षित भी क्यों न हो, दुर्जन को दूर रखना चाहिए । मणि के रखते हुए भी सर्प भयंकर ही तो है !]

लोभ श्चे दगुणेन किं? पिशुनता य द्यस्ति किं पातकैः?
सत्यं चे त्तपसा च किं? शुचि मनो य द्यस्ति तीर्थेन किं?
सौजन्यं यदि किं भलेन? महिमा य द्यस्ति किं मण्डनैः?
सद्विद्या यदि किं धनैः? अपयशो य द्यस्ति किं मृत्युना? ॥ ३ ॥

[लोभी के लिए और किसी दुर्गुण की क्या आवश्यकता है? चुगली खानेवाले के लिए और पाप ही क्या है? सत्यवादी के लिए तपस्या की क्या जरूरत है? निर्मल हृदय रखनेवाले के लिए तीर्थयात्रा करने की क्या आवश्यकता है? सज्जन व्यक्ति के लिए मनुष्य-बल की क्या आवश्यकता है? प्रतिष्ठित व्यक्ति के लिए अलंकार ही क्यों? विद्वान के लिए धन किस लिए? अपयश रखनेवाले के लिए दूसरी मृत्यु की क्या जरूरत है?]

दुर्जन

शिथिलालय

[२३]

[मंदिर पर ढके पत्थरों को शिखिमुखी तथा विक्रमकेसरी हटा रहे थे, तब अघोरियों के गुरु घोरचित्त ने वहाँ पर प्रवेश करके शिखिमुखी के द्वारा सारी कहानी सुनी। मौत के मुँह में स्थित शिथिलालय के पुजारी का परामर्श किया और अपने शिष्यों तथा इभ्यु जातिवालों को हाथियों की मदद से पत्थरों को हटाने का आदेश दिया। बाद—]

घोरचित्त के शिष्य तथा इभ्यु जाति के लोग शिथिलालय पर ढकी चट्टानों को हटाने में लगे। उन लोगों ने अपने साथ लाये हुए रस्सों को पत्थरों से बांध दिया तथा दूसरे छोरों को हाथियों की कमरों से बांध कर उन्हें हांका। हाथी घींकार करते चट्टानों को दूर खींच ले जाने लगे।

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी घोरचित्त की बगल में खड़े हो इस कुतूहल के साथ देखने लगे कि कब शिथिलालय प्रकट होगा।

सूरज के डूबने के दो-तीन घंटे पहले ही सारे पत्थर हटाये गये, तब शिथिलालय साफ़ दिखाई देने लगा। वहाँ पर देवी की मूर्ति तथा मूर्ति के सामने टीलों के रूप में पड़े सोने के टुकड़ों को देख शिखीमुखी और विक्रमकेसरी अचरज में आ गये। मगर उन्हें सोने का लोभ न था। वे इस

विचार से शिथिलालय के सभी कमरों में ढूंढ़ने लगे कि महाराजा विक्रमकेसरी जो अपूर्व शिल्प यहाँ से ले जाना चाहते थे, वे कहाँ पर हैं।

शिखीमुखी ने देखा कि एक अंधेरे कमरे के पीछे से पतली रोशनी फूट रही है। वह विक्रमकेसरी को यह खबर सुना उस रोशनी की जगह जा पहुँचा। वहाँ पर सात-आठ फुट की ऊँची नक्काशी की गयी शिला थी। रोशनी उस शिला की बग़ल में से बाहर फूट रही थी।

"विक्रम! लगता है कि इसके पीछे कोई बड़ा कमरा है। भीतर से रोशनी आती है तो उस कमरे के ऊपरी भाग पर शायद छत न होगी।" शिखिमुखी ने विक्रम से कहा।

"मुझे भी यही संदेह हो रहा है, लेकिन यह शिला आसानी से हिलनेवाली नहीं लगती।" विक्रम ने उस शिला को हिलाने का प्रयत्न करते कहा।

शिखिमुखी ने अपने अनुचरों को पुकारा। सब ने मिलकर उस भारी शिला को ढकेल दिया। शिला भारी आवाज़ के साथ गिर गयी। तब उन्हें उस कमरे में जगमगाने वाले सोने तथा लोहे की मूर्तियाँ साफ़ दिखायी दीं।

उन मूर्तियों को देख शिखिमुखी तथा विक्रमकेसरी परम प्रसन्न हुए। उनके देश में ऐसे अनुपम शिल्प तैयार करनेवाले शिल्पी कोई नहीं हैं। दादा विक्रमकेसरी ने इम्म्यु जाति वालों द्वारा उन शिल्पों के बारे में जो कुछ सुना था, उसमें ज़रा भी असत्य नहीं है।

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी उन शिल्पों का समाचार घोरचित्त को देने के विचार से मंदिर से बाहर आये। उन्हें मंदिर के सामने एक शिला पर घोरचित्त तथा बग़ल में अपने जंगली साथियों की

भुजाओं के सहारे खड़े हो देवी की मूर्ति देखनेवाले पुजारी दिखाई दिये। सवर गीध इधर-उधर उछलते पुजारी से कुछ कह रहा था।

शिखिमुखी के निकट आते ही शिथिलालय का पुजारी उसे प्रणाम करते बोला—"शिखी, तुम जंगली हो और उम्र में मुझ से छोटे हो, फिर भी मैं तुमको प्रणाम किये बिना नहीं रह पा रहा हूँ। तुम्हारी हिम्मत तथा घोरचित्त की मदद से मैं शिथिलेश्वरी के दर्शन कर सका। मैंने सोचा था कि यहाँ पर प्राप्त होनेवाले सोने-चाँदी से महाराजा की ज़िंदगी बिताऊँ? लेकिन माता शिथिलेश्वरी ने कुछ और सोचा। मैंने कहा था कि मैं एक हज़ार सालों से इस मंदिर का पुजारी हूँ—मगर इसका मतलब यह नहीं कि इसी जन्म में हज़ार साल नहीं, मेरे सभी पूर्व जन्मों की आयु को मिला कर। मुझे अपने पूर्वजन्मों का ज्ञान है।" ये शब्द कहते झूमते हुए आँखे मूँदकर पुजारी गुनगुनाने लगा।

शिखिमुखी ने पुजारी को सहारा देनेवाले डाकुओं को सचेत करते कहा—"खबरदार, ज़ोर से कसकर पकड़ लो, पैर फिसलकर आगे गिर गया तो मौत निश्चित है।"

पुजारी ये बातें सुनकर आँखें खोलते हुए बोला—"शिखी, मैं और ज्यादा दिन किसी भी हालत में जी नहीं सकूँगा। अगर ज़िंदा भी रहूँ तो अपने पैरों को कटवाकर लंगड़े की निकृष्ट ज़िंदगी बितानी होगी। इसलिए मैं तुमसे तथा विक्रम से यही बिनती करता हूँ कि मेरे शिष्य सवरगीध तथा इन दोनों जंगली अनुचरों को दण्ड न देकर क्षमा कर छोड़ दो।"

शिखिमुखी ने विक्रम की ओर देखा। विक्रम ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया। इस पर शिखिमुखी ने पुजारी से कहा—"तुम उन लोगों की चिंता न करो। उन्हें

हाथों से छुड़ाकर शिला पर से पुजारी नीचे कूद पड़ा ।

शिखिमुखी, घोरचित्त तथा उनके अनुचरों ने झांककर पुजारी की ओर देखा । पुजारी खून से सने पत्थरों पर एक-दो क्षण तड़प कर सदा के लिए शांत एवं अचल हो गया ।

"दुष्ट और महा पापी की मौत ही यह मरा!" लंगड़े जांगला ने उत्साह में आकर कहा ।

"ऐसा न कहो । पुण्यात्मा और महा भक्त की मौत यह मरा । महादेवी के सामने कितने लोगों को ऐसी मौत प्राप्त होगी?" घोरचित्त ने चिंता भरे स्वर में कहा ।

"मेरे गुरु अपने रास्ते आप चले गये । भेरुण्ड की भांति आसमान में उड़ने की मेरी ताक़त भी जाती रही ।" इन शब्दों के साथ सवरगीध की आँखों में आँसू छलछला पड़े ।

शिखिमुखी ने उसे डांटते कहा—"अरे, सवरगीध! आसमान में उड़ने की ताक़त तुम्हें कभी न रही! शराब पीकर नशे में तुम ऐसा सोचते थे । अब भी सही, तुम सही रास्ते न आओगे, तो तुमको मैं सवरनेता लट्टूसिंह को सौंप दूंगा ।"

स्वयं सोचने का दिमाग़ नहीं है । वे लोग किसी भी समर्थ व्यक्ति की ईमानदारी से सेवा करेंगे । इस क्षण से इनको मैं अपने अनुचरों में मिला लेता हूँ । तुम प्रसन्न हो न?"

पुजारी पीड़ा से कराह उठा । जबर्दस्ती मुस्कुराते बोला—"मुझे प्रसन्न पूछते हो, शिखी? इस क्षण में मुझ से ज्यादा तृप्ति और आनंद का अनुभव करनेवाला इस दुनिया में और कौन है? मैंने इन आँखों से शिथिलेश्वरी को देखा है! लो, वह देवी मुझे बुला रही है...मुझे बुला रही है!" ये शब्द कहते अपने अनुचरों के

"ऐसा ही करो साहब! विन्ध्याचाल पार कर हिमालयों में पहुँचा हुआ सवर जाति का आदमी कौन है? सवर लट्टूसिंह ज़रूर मेरी इज्ज़त करेगा। लेकिन उसकी पुत्री नागमल्ली से मुझे बचाओ।" सवरगीध ने गिड़गिड़ाया।

उसकी बातें सुनकर सब लोग हँसते-हँसते लोटपोट हो गये।

सूर्योदय के साथ सब लोग यात्रा की तैयारियाँ करने लगे। शिथिलालय के अपूर्व शिल्पों को अपने देश ले जाने की अनुमति शिखिमुखी तथा विक्रमकेसरी ने वृच्छिक नायक से माँगी। वृच्छिक नेता ने अपनी जाति के लोगों से परामर्श करके कहा—"इन शिल्पों को ही नहीं, बल्कि वृच्छिक माता के मंदिर के सोने के टुकड़ों को भी आप लोग उठा ले जाइये। इस वृच्छिक टापू में हमें इनकी बिलकुल ज़रूरत नहीं है। हमें वृच्छिक माता मिल गयी हैं। इस जंगल में ज़रूरत भर के शिकार और फल हैं! और हमें क्या चाहिए?"

शिखिमुखी ने वृच्छिक नेता के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की, तब विक्रम से कहा—"विक्रम, मैं एक जंगली के रूप में बात करता हूँ। सोना मनुष्य को तक़लीफों और कठिनाइयों में डाल देता है! शिकार खेलकर जीनेवाले हमारी शबर जाति के लोगों का यही विश्वास है!"

इस पर विक्रम ने हँसकर कहा—"तुम्हारी ईमानदारी विश्वास करने योग्य है। लेकिन मैं एक क्षत्रिय तथा शूरसेन देश के राजकुमार के रूप में बात करता हूँ। समर्थ एवं विवेकशील राजा के हाथ में उस सोने के द्वारा जनता की भलाई ही होती है। साथ ही शत्रुओं का संहार भी कर सकता है।"

"ऐसी बात हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। उन अपूर्व शिल्पों के साथ सारे

अब मुझे याद आ रहा है कि उसी चोटी के वास्ते इतनी दूर आये हैं। ओह, नागमल्ली कैसा प्रतीकार चाहती है?" शिखिमुखी ने हँसते कहा।

"वह नागमल्ली नहीं, कालानाग है! ऐसी नारियों में दुश्मनी और प्यार भी बराबर होते हैं। सच है न?" विक्रम ने कहा।

शिखिमुखी मुस्कुराते रह गया। इसके बाद उन दोनों ने अपने अनुचरों की मदद से शिथिलालय के सोने व शिल्पों को नौकाओं पर चढ़ाया। दुपहर के समय

सोने को भी तुम अपनी राजधानी में उठा ले जाओ।" शिखिमुखी ने कहा।

"मैं अकेले उन्हें उठा नहीं ले जाऊँगा। तुम भी पहले मेरे साथ मेरी राजधानी में चल रहे हो! इसके बाद हम दोनों मिलकर तुम्हारे गाँव चलेंगे। तुमने शिथिलालय के पुजारी की चोटी काट दी है। क्या उसे सुरक्षित छिपा रखा? सवर नेता लट्टूसिंह की पुत्री नागमल्ली ने वह चोटी माँगी है, याद है न?" विक्रमकेसरी ने कहा।

"हाँ, मैंने पूर्वी घाटियों के पर्वत एवं जंगलों से इतनी दूर की यात्रा की है।

दो नौकाएँ गोलभरा की ओर रवाना हो गयीं। विदाई देने आये हुए वृच्छिक नेता के प्रति शिखी तथा विक्रम ने कृतज्ञता प्रकट की। घोरचित्त ने उससे वादा किया कि साल में एक बार वह अपने शिष्यों के साथ वृच्छिक टापू में आकर देवी के दर्शन करेगा।

रास्ते में बिना किसी प्रकार के खतरे के दो सप्ताह बाद दोनों नौकाएँ गोलभरा गाँव पहुँची। वहाँ पर इभ्यु जाति के नायक ने सब का स्वागत करके दो दिन तक दावतों का इंतज़ाम किया। विक्रमकेसरी ने उन शिल्पों में से देवता

की एक बढ़िया मूर्ति को अपने दादा विक्रमकेसरी की समाधि के सामने स्थापित किया। नांगसोम तथा अन्य लोगों में अपने साथ लाये सोने में से थोड़ा अंश बांट दिया।

तीसरे दिन सवेरे गोलभरा के इभ्यु जातिवालों से बिदा लेकर शिखिमुखी का दल रवाना हुआ। दो सप्ताह बाद कामाख्या नगर पहुँचकर उसी सराय में ठहरे, जहाँ वे लोग पहले ठहर चुके थे। सराय के मालिक ने उन्हें पहचान कर उनका अच्छा आदर किया, तब लंगड़े जांगला द्वारा शिथिलालय की सारी कहानी सुनी।

कामाख्या नगर में एक सप्ताह तक आराम करने के बाद घोरचित्त अपने शिष्यों के साथ फिर से हिमालय के तीर्थों में जाते विक्रमसिंह से गले लगाकर बोला– "हमारे गुरु महाराजा विक्रमकेसरी ने अघोरियों की जो सहायता की, उसके बदले उनके पोते तुम्हारी हम यथाशक्ति मदद कर सके। इसलिए हमें बड़ी खुशी हो रही है। तुमको सौ साल की आयु प्राप्त हो! इसके बाद तुम्हें शिवजी का सान्निध्य प्राप्त हो, यही मेरी कामना है।"

कामाख्या नगर से रवाना होते समय शिखिमुखी ने लंगड़े जांगला को अपने साथ चलने को कहा। यह भी आश्वासन दिया कि उसकी ज़िंदगी भर उसे आराम से रखेगा। मगर वह उस शहर को छोड़ने के लिए राजी न हुआ। तब विक्रम ने उसे थोड़ा सोना देकर सारी ज़िंदगी आराम से बिताने की सलाह दी।

उस सोने को देखते ही लंगड़े जांगले की आँखें कृतज्ञता पूर्वक सजल हो उठीं। उसने गद्‌गद्‌ स्वर में कहा–"साहब! मैंने आपको पहले दगा दिया, फिर भी आप

दोनों ने मुझे क्षमा कर दिया। मैं यहीं पर एक सराय बनवाकर आराम से अपने दिन काटूँगा। इस प्रदेश को देखने आपके पुत्र कभी आवें तो मैं अपनी सराय में उनका आतिथ्य करूँगा।"

शिखी और विक्रम जांगला की बातों पर बहुत खुश हुए। इसके बाद अपने साथ लाये सोना व शिल्पों को ढोने के लिए घोड़े व कुलियों का उचित प्रबध किया, तब अपने अनुचर अजित और वीरभद्र को साथ ले तीन महीनों की यात्रा के बाद शूरसेन देश की राजधानी जा पहुँचे।

विक्रमकेसरी के पिता जयपाल ने उनका राजोचित सम्मान किया। अपने भटों के द्वारा सवर नेता लट्टूसिह तथा शिखिमुखी के बाप शिवाल को खबर देकर उन्हें परिवारों के साथ अपनी राजधानी में बुला भेजा।

सवर नेता लट्टूसिह की बेटी नागमल्ली ने शिखिमुखी को देखते ही पूछा—"क्या तुम उस दुष्ट शिथिलालय के पुजारी की चोटी लाये हो?"

कई दिनों से अपनी कमर में हिफाजत के साथ छिपाई गयी पुजारी की चोटी शिखिमुखी ने नागमल्ली के हाथ दी। नागमल्ली की खुशी का ठिकाना न रहा। विक्रमकेसरी के द्वारा राजा जयपाल ने शिखी और नागमल्ली के प्रेम का समाचार सुना और उन दोनों के माता-पिताओं से बात कर एक शुभ मुहूर्त में शिखी और नागमल्ली का विवाह वैभव के साथ किया।

शबर तथा सवर जाति के बुजुर्ग, उनके बच्चे, उनके अनुचर सब लोग एक महीने तक जयपाल के यहाँ दावत व विनोदों के साथ अपना समय बिताकर अपने अपने गाँव चले गये। (समाप्त)

अपकार

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, यह सोचकर चिंता न करो कि तुम्हारा श्रम व्यर्थ जा रहा है। समय साथ दे तो बड़ी से बड़ी विपदा भी दूर हो जायगी और तुम्हारा शुभ होगा। इसके उदाहरण के स्वरूप में तुमको लीलावती की कहानी सुनाता हूँ, श्रम को भुलाने के लिए सुनो।

बेताल यों कहने लगा: अरावली पहाड़ी प्रदेश में मही नामक एक छोटा राज्य था। पहाड़ की पंक्तियों के उस पार के कई छोटे-मोटे राज्यों को भल्लाट नामक युवराज ने जीत लिया और एक विशाल राज्य स्थापित कर कठोर शासन करने लगा।

वेताल कथाएँ

भल्लाट बड़ा बलवान था। उसके सैनिक राक्षसों से भी बढ़कर भयंकर थे। इसलिए भल्लाट के अधीन न रहनेवाले कई छोटे राज्यों के शासकों ने उसके साथ संधि कर ली और उसके आदेशों का पालन करने लगे।

मही देश के राजा ने भी भल्लाट के साथ अपमान जनक संधि ही कर ली। उस संधि के अनुसार मही देश से हर साल बीस कन्याओं को भल्लाट के पास भेंट में भेज दिया करता था। इन कन्याओं को एक पहाड़ी मोड़ तक पैदल चलकर जाना था। उस मोड़ तक उन कन्याओं के रिश्तेदारों का जाना मना था। इस अपमानजनक नियमों को स्वीकार कर मही देश का राजा हर साल बीस कन्याओं को भेंट दिया करता था।

इस तरह कई साल बीत गये। एक वर्ष राजकुमारी लीलावती की बारी आयी। राजा का सर लज्जा से झुक गया। उसे तब मालूम हुआ कि उसकी हालत कैसी लज्जा जनक है। लेकिन वह कुछ नहीं कर सकता था। अगर वह इस नियम का उल्लंघन करे तो भल्लाट चन्द मिनटों में मही राज्य को तहस-नहस कर सकता था।

सभी कन्याओं को घाटी में लाकर मोड़ से थोड़ी दूर पर उनके रिश्तेदार रुक गये। विदाई तथा रोना-धोना समाप्त हुये। सभी कन्याएँ मोड़ की ओर बढ़ीं। सब से सौ गज़ पीछे लीलावती भी अकेली चल पड़ी। जहाँ वे मोड़ में घूम जाती हैं वहाँ पर एक दूसरा मार्ग आ मिलता है। उस मार्ग से एक युवा अश्वारोही चला आ रहा था।

अपने पीछे घोड़े की टापों की आवाज़ सुनकर लीलावती ने घूमकर देखा। अश्वारोही ने उसके निकट आकर पूछा– "तुम कौन हो? देखने में कुलीन कन्या

मालूम होती हो। इन पहाड़ों के बीच अकेली कहाँ जा रही हो?"

"आप कौन हैं? ऐसे खतरनाक प्रदेश में अकेले क्यों आये?" लीलावती ने पूछा।

"मैं काश्मीर का युवराजा हूँ। मेरा नाम जयंत है। एक साल से मैं देशाटन कर रहा हूँ। अब मैं अपने नगर को लौट रहा हूँ। तुम इस प्रदेश को खतरनाक बताती हो, लेकिन मुझे ऐसा तो नहीं लगता।" जयंत ने कहा।

"इसी रास्ते से थोड़ी दूर आगे बढ़ेंगे तो एक नुक्कड़ होगा। वहाँ पर तीस तलवारधारी सैनिक और उनका सरदार होगा। वे सब यवन सैनिक हैं। तिस पर भल्लाट के सिपाही हैं। वे मामूली भट नहीं, काल के भटों के समान हैं।" लीलावती ने समझाया।

"ऐसे प्रदेश में तुम अकेली क्यों जाती हो? वाह, तुम्हारी कैसी हिम्मत है?" जयंत ने पूछा।

"मैं अकेली नहीं जा रही हूँ। मेरी जैसी उन्नीस और कन्याएँ आगे जा रही हैं।" लीलावती ने उत्तर दिया।

जयंत ने सोचते हुये पूछा–"क्या बीस कन्याएँ तीस तलवारधारी सिपाहियों को जीत सकती हैं? कैसा आश्चर्य है?"

"ओह, आपको असली बात मालूम नहीं, हमारे मही देश से प्रति वर्ष भल्लाट के पास बीस कन्याएँ भेंट में भेजी जाती हैं। वरना वह हमारे देश को मटियामेट कर देगा। उसका सामना करने की ताक़त हमारे देश को नहीं है।" लीलावती ने असली बात बतायी।

जयंत का चेहरा क्रोध से लाल हो उठा।

"यह कैसा जंगलीपन है? यह सही है कि दुनिया में बलवान हैं, मगर क्या वे निर्बलों का कहीं ऐसा अपमान भी करते हैं? क्या तुम्हारे राजा में पौरुष नहीं है? चाहे जो भी हो, मेरे रहते यह नहीं हो सकता। मैं उन यवनों की ख़बर लूंगा।" ये शब्द कहते जयंत ने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया।

पहाड़ी रास्ते का मोड़ पार करते ही उसे उन्नीस कन्याएँ और दिखाई दीं। उनसे थोड़ी दूर पर पहाड़ी चट्टानों के बीच एक संकरीला रास्ता है। उस रास्ते के आगे एक ऊँचे प्रदेश में एक वृक्ष के नीचे यवन सैनिक बैठे थे।

जयंत ने उन कन्याओं को रोककर कहा–"तुम सब लौट कर अपने नगर में चली जाओ। इस वर्ष यवनों को भेंट नहीं दिया जायगा।"

कन्याएँ रुक कर लौट गयीं।

यह सब देखनेवाले यवन सरदार ने अपने दो भटों को जयंत पर हमला करने भेजा।

जयंत ने बड़ी चालाकी से उन्हें संकरीले मार्ग में आने दिया, तब उनका सामना किया। रास्ता संकरीला था। इसलिए सैनिकों को बड़ी तक़लीफ़ हुई। वे दोनों एक साथ जयंत पर हमला नहीं कर पाये, साथ ही उसके वारों से बचने के लिए भी उनके घोड़ों को पर्याप्त जगह न थी।

थोड़ी देर में वे दोनों जयंत के हाथों में मर गये।

इस पर बाक़ी सभी सैनिक एक साथ जयंत पर कूद पड़े। लेकिन जयंत उस संकरीले रास्ते से आगे न बढ़ा, वहीं रहकर उसने बाक़ी सबको मार डाला। उनमें एक सैनिक ने भी वास्तव में जयंत के साथ युद्ध नहीं किया। एक की राह में एक आगे बढ़कर सब उसके हाथों में मारे गये।

जयंत उन मरे हुए सैनिकों को पारकर वहाँ पर आया जहाँ सरदार एक वृक्ष के नीचे खड़ा था।

"मेरे सैनिकों को मार दिया, कोई बात नहीं, अब तुम मेरे हाथों में मर जाओ! पहले तुम घोड़े पर से उतर जाओ!" सरदार ने कहा। सरदार म्यान से तलवार निकाल कर लड़ने को तैयार खड़ा था।

जयंत घोड़े से उतरकर तलवार ले सरदार पर हमला कर बैठा। दुर्भाग्य से जयंत की तलवार सरदार के शिरस्त्राण में फँस गयीं। शिरस्त्राण नीचे गिर पड़ा। मगर जयंत की तलवार टूट गयी।

"अबे कुत्ते! हार मान जाओ!" सरदार गरज उठा।

"अरे बदमाश! तेरे साथ लड़ने के लिए तलवार चाहिए?" यह कहते जयंत ने पेड़ की डाल तोड़ दी और जोर से सरदार के सर पर दे मारा। सरदार नीचे गिरकर मर गया।

जयंत अपने घोड़े पर सवार हो, वहाँ आ पहुँचा जहाँ कन्याएँ सब इकट्ठी हुई थीं।

"तुम सब अपने घर लौट जाओ।" यह कहकर जयंत लीलावती की ओर घूम पड़ा और पूछा—"मैं तुमको उपहार के रूप में स्वीकार करता हूँ। तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है न?"

"आप मेरे नगर में आइये। मेरे पिता बड़ी प्रसन्नता के साथ हम दोनों का विवाह करके आपके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करेंगे।" लीलावती ने कहा।

"नहीं, मुझे जल्द अपने देश को लौटना है। तुम्हारे पिता ने पहले ही तुमको विदाई दी है। मेरे साथ विवाह करना चाहती हो तो मेरे साथ आ जाओ।" जयंत ने कहा।

लीलावती मान गयी। जयंत के साथ कांश्मीर चली गयी। वहां पर उन दोनों का विवाह वैभव के साथ हुआ और वे बड़े आराम से रहने लगे।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा- "राजन, मेरा एक संदेह है। जयंत ने महीदेश के राजा का बड़ा उपकार किया, इसलिए उसके पास जाकर उसकी कृतज्ञताएँ स्वीकार करके उसी के हाथों से कन्यादान क्यों प्राप्त नहीं किया? लीलावती को साथ ले वह सीधे अपने देश को क्यों लौटा? लीलावती को पुनः देख उसके पिता भी बहुत प्रसन्न होता! इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा-"महीदेश के राजा के प्रति जयंत ने उपकार नहीं किया, बल्कि अपकार किया। भल्लाट के भटों को मारकर कन्याओं को वापस भेजने मात्र से महीदेश भल्लाट के भय से मुक्त न हुआ, बल्कि उसका भय और बढ़ गया। जयंत ने लीलावती के वास्ते ही ऐसी हिम्मत दिखायी। इसलिए वह मही के राजा के पास न जाकर सीधे अपने देश को चला गया।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

उपदेश

एक गाँव में एक कुम्हार था। उसके एक लड़का था। उसे एक बुरी आदत थी कि वह खाने बैठता तो आधा खाने के बाद उंगलियों से बाक़ी खाना तितर-बितर कर छोड़ देता था। "बेटा, हम लोग गरीब हैं। खाना फेंकना नहीं चाहिये।" माता-पिता ने उसे बहुत समझाया, पर उसके कानों पर जूँ तक नहीं रेंगे।

उस गाँव में एक पंडित था। सब लोग उस का आदर करते थे। कुम्हार ने पंडित के पास जाकर अपने लड़के की बुरी आदत बतायी और उसे सुधारने के लिए उपदेश देने की बिनती की।

"तुम अपने पुत्र को दो सप्ताह बाद मेरे पास ले आओ।" पंडित ने जवाब दिया। कुम्हार को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह चुपचाप घर लौटा और दो सप्ताह बाद अपने पुत्र को साथ ले पंडित के पास आ पहुँचा।

"अरे बेटा! अन्न तो ब्रह्म स्वरूप है।" पंडित ने लड़के को भली भांति उपदेश देकर भेज दिया।

उस दिन से कुम्हार का बेटा एक भी दाना फेंकता न था, सारा खाना खा लेता था।

कुम्हार ने पंडित के पास जाकर अपनी कृतज्ञता प्रकट की और पूछा–"पंडितजी, मेरे लड़के को सुधारने के लिए आपने दो सप्ताह का समय क्यों माँगा?"

"भाई, तुम्हारे लड़के की जो बुरी आदत थी, वही मेरी भी थी। उस आदत को बदलने के लिए मैं ने दो सप्ताह का समय माँगा। मैं जो गलती करता हूँ, उसे सुधारने के लिए मैं तुम्हारे पुत्र से कैसे कह सकता था?" पंडित ने जवाब दिया।

स्वर्ग का अधिकारी

पुराने जमाने की बात है। इटली देश में बेप्पोपिपेट्टा नामक एक युवा सैनिक था। वह एक दिन एक निर्जन जंगल से जा रहा था। रास्ते में उसने देखा कि एक व्यापारी को दो डाकू लूट रहे हैं। बेप्पो शेर की भांति डाकुओं पर कूद पड़ा और उन्हें भगा दिया। व्यापारी को कोई चोट न हुई थी। इसलिए सैनिक प्रसन्न हुआ और अपने रास्ते आगे बढ़ा।

बेप्पो ने जो साहस दिखाया, उसका अच्छा फल उसे तुरंत मिल गया। क्यों कि चोरों के हाथों में जो व्यक्ति फँस गया था, वह व्यापारी नहीं था, बल्कि वेश बदलकर घूमनेवाला उस देश का राजा ही था। बेप्पो की सहायता के लिए राजा ने मन ही मन कृतज्ञता प्रकट की, उसके साहस पर राजा प्रसन्न हुआ। उसने बेप्पो को निकट बुलाकर कहा–"आज से तुम पर राज्य के कोई बंधन व नियम लागू न होंगे। तुम्हारी इच्छा हो तो युद्ध कर सकते हो, नहीं तो आराम कर सकते हो। चाहे जहाँ भी तुम आज़ादी के साथ घूम सकते हो। ज़िंदगी-भर मैं तुम्हारा पोषण करूँगा और तुम्हारा सारा खर्च मैं उठाऊँगा।"

बेप्पो को इस से बढ़ कर और क्या चाहिए था? उसने आज तक फौज़ी सिपाही का जो थैला ढोया था, उसे दूर फेंक दिया और बड़ी निश्चितता एवं स्वेच्छा के साथ अपने दिन काटने लगा। एक दिन बेप्पो की एक बूढ़े सैनिक से मुलाक़ात हुई। उसने बेप्पो से पूछा–"तुम सैनिक हो तो तुम्हारा थैला कहाँ?"

"सैनिक का काम किये बिना ही मेरे मालिक मेरा सारा खर्च उठा रहे हैं।" बेप्पो ने जवाब दिया।

"तुम बड़े ही भाग्यवान हो! तब तो मैं अपना थैला तुम्हें दे देता हूँ, ले लो। यह मामूली थैला नहीं। इसका मुँह खोलकर सामनेवाले व्यक्ति से कहो कि 'कूद पड़ो', वह व्यक्ति इस थैले में कूद पड़ेगा। जब तक तुम थैले का मुँह न खोलोगे, तब तक वह बाहर न निकलेगा। मैं कई सालों से इस थैले के साथ खेल रहा हूँ। अब मैं ऊब गया हूँ। तुम भी कुछ समय तक इसके साथ खेल लो।" बूढ़ा सैनिक बेप्पो को थैला दे चला गया।

बेप्पो ने जाँच करके थैले की महिमा को जान लिया। उसके साथ जो एक-दो व्यक्तियों ने झगड़ा किया, उन्हें "कूद पड़ो" कहकर थैले में बंद किया, वे दोनों तब तक थैले में रहें, जब तक उनको उसने न छोड़ा।

बेप्पो ने दो साल अपने गाँव में बिताये, जब उससे वहाँ न रहा गया, तब वह राजधानी को लौट आया। सारे नगर में शोक छाया हुआ था। हर घर पर काले कपड़े लटक रहे थे। उसने लोगों से इसका कारण पूछा। उन लोगों ने बेप्पो से बताया—"क्या तुम नहीं जानते? आज आधी रात के वक़्त शैतान आकर राजकुमारी को उठा ले जायगा। कुछ साल पहले इस शैतान ने राजा के हाथ से एक क़ागज़ पर दस्तखत करवा लिया था। राजा की समझ में न आया कि उस क़ागज़ पर क्या लिखा हुआ है, राजा ने लोभ में आकर दस्तखत किया था। आख़िर पता चला कि आज की रात को राजकुमारी को शैतान के हाथ सौंपना है।"
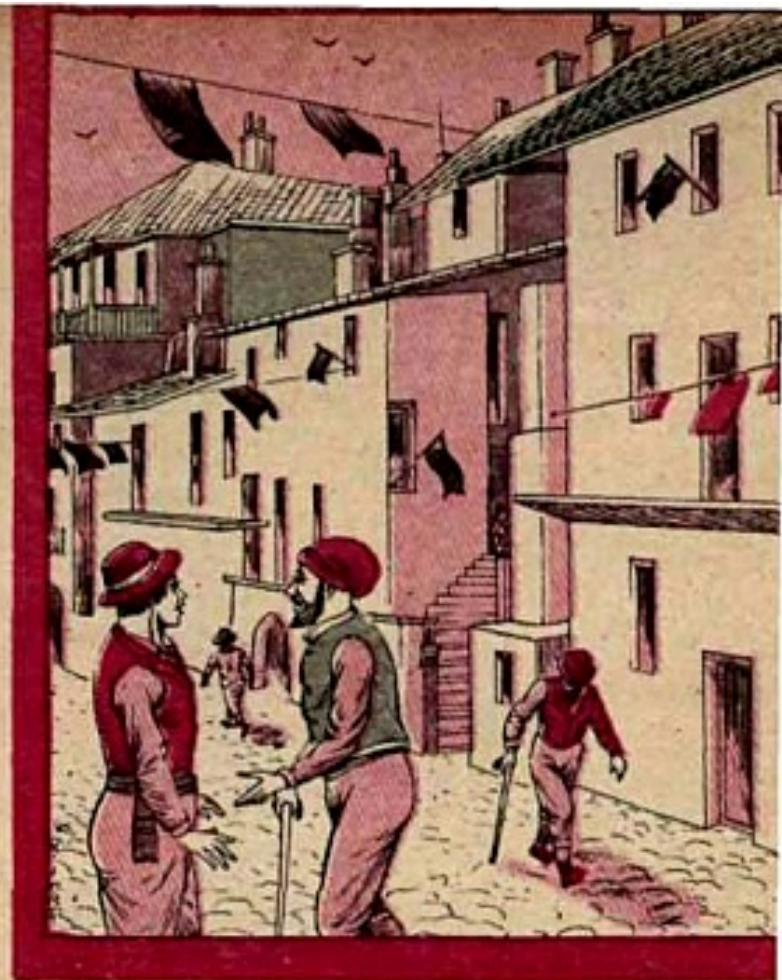
बेप्पो तुरंत राजा के पास जाकर बोला—"महाराज, आपने मेरा उपकार किया, उसके बदले में शैतान के हाथों में पड़ने से राजकुमारी को बचाऊँगा।"

"तुम्हारे साहस से में परिचित हूँ। लेकिन इस मामले में तुम या कोई और कुछ नहीं कर सकोगे। मैंने धोखे में आकर ही सही, दस्तखत कर दिया है।" राजा ने जवाब दिया।

"ऐसा धोखा हम भी उसे दे सकते हैं। राजकुमारी के कमरे के बगल का कमरा मुझे दिला दीजिये। याने शैतान को मेरा कमरा पार करके ही राजकुमारी के कमरे में प्रवेश करने के लायक़ हो! मुझे एक मेज़, एक लाठी, क़लम, दवात और कागज दिला दीजिये। बाक़ी काम मैं देख लूँगा।" बेप्पो ने राजा से पूछा।

राजा के मन में ज़रा भी विश्वास न था कि बेप्पो इस खतरे को टाल सकता है। फिर भी राजा ने बेप्पो के कहे अनुसार सारा इंतज़ाम किया। राजकुमारी के बाज़ूवाले कमरे में जाकर बेप्पो ने मेज़ पर अपना थैला रखा। उसका मुँह खोल कर रखा, तब कमरे की खिड़की खोलकर उसके निकट ही खड़ा हो गया।

ठीक आधी रात के समय ज़मीन काँप उठी। बिजली चमकी, बादल गरजने लगे। सब ओर गंधक की बास फैल गयी। एक पुच्छलतारा की भांति शैतान राजमहल में घुसते आने लगा। "कूद पड़ो" बेप्पो के मुँह से निकलते ही शैतान सीधे आकर थैले में घुस पड़ा। बेप्पो ने उसका मुँह बंद किया।

थोड़ी देर तक शैतान गरजता रहा, फिर चुप हो गया। बेप्पो ने शैतान से पूछा–"तुम किसलिए यहाँ आये हो?"

"इससे तुम्हारा कोई मतलब नहीं!" शैतान ने थैले के भीतर से जवाब दिया।

"इससे मेरा मतलब ज़रूर है। तुम राजकुमारी को उठा ले जाने आये हो। तुम्हारे प्रयत्न में बाधा डालने मैं आया हूँ। तुम मुझसे वादा करो कि राजकुमारी

के पास तक न पटकोगे, तभी मैं तुमको थैले से मुक्त कर सकता हूँ।" बेप्पो ने गरज कर पूछा।

"ऐसा कभी नहीं हो सकता। आज की आधी रात से राजकुमारी मेरी संपत्ति है। राजा ने इसे मानते हुए मुझे पत्र लिख कर दिया है।" शैतान ने कहा।

"यह बात मैं भी जानता हूँ। उस समझौतेवाले पत्र को फाड़ दोगे कि नहीं? मैं अंतिम बार पूछता हूँ।" बेप्पो ने ललकारते हुए पूछा।

"मेरे मामलों में तुम दखल मत दो। मुझे बाहर आने दो।" शैतान ने कहा।

"अच्छी बात है!" यह कहते बेप्पो लाठी से थैले पर पीटने लगा।

शैतान नरक लोक का प्रभु है। वहाँ पर उसे शारीरिक पीड़ा बिलकुल नहीं होती। लेकिन यदि वह मानवलोक में आना चाहता है, तो उसे मानव सहज गुणों से भरे शरीर को धारण करके प्रवेश करना पड़ता है। इसलिए लाठी के प्रहार शैतान के शरीर को पीड़ा देने लगे। इस पीड़ा से शैतान कराहते हुए चिल्ला पड़ा। जब वह उन मारों को सहन न कर पाया तब उसने बेप्पो से बिनती की कि अगर

उसे बाहर आने दिया जाय तो वह राजमहल से भाग जायगा।

"तुम समझौते पत्र पर दस्तखत करानेवाले हो, इसलिए मैं तुम्हारी बातों पर यक़ीन नहीं करूँगा। तुम थैले से अपना हाथ निकाल कर मेरे इस समझौते पत्र पर दस्तखत करो, इसके बाद ही मैं तुमको मुक्त कर सकता हूँ।" इन शब्दों के साथ एक समझौता पत्र बेप्पो ने आगे बढ़ाया, उस पर शैतान के देस्तखत करा कर उसे मुक्त किया। गंधक की बास फैलाते बिजली चमकी। शैतान भाग निकला।

इसके बाद दरबार लगा। राजा, राजकुमारी तथा दरबारी लोग बेप्पो को घेरकर उसकी तारीफ़ करने लगे। बेप्पो लज्जा के साथ सर झुकाये हुए था। राजा ने उसका सम्मान करते एक बहुत बड़ा भोज दिया।

बेप्पो अब देशाटन से ऊब गया था। उसने एक जगह स्थाई निवास बनाने का निश्चय किया। सभी प्रदेश ढूंढ कर आखिर एक नदी के किनारे सुंदर कुटीर देखा। उसके चारों तरफ़ फल व फूलों के बगीचे थे। उस कुटीर में अपना स्थाई निवास बनाकर सारी ज़िंदगी वहीं बिताने का बेप्पो ने निर्णय किया।

कई साल आराम से बीत गये। एक दिन बेप्पो के पास एक अपरिचित व्यक्ति आया। वह देखने में काला, शांत और चिंता मग्न था।

बेप्पो ने पूछा–"तुम कौन हो?"

"मैं मृत्यु हूँ।" उसने जवाब दिया।

"ओह, ऐसी बात है। तब तो कूद पड़ो।" ये शब्द कहते बेप्पो ने अपना थैला खोल दिया। मृत्यु उस में कूद पड़ा और डेढ साल तक उसी में रहा।

इस अवधि में बेप्पो ने मृत्यु को सताया नहीं, बल्कि उसके साथ स्नेहपूर्वक बातचीत करता रहा। मृत्यु ने ही बेप्पो को डरा-धमकाकर, तर्क करके, गिड़गिड़ाकर भी थैले से बाहर निकलने का प्रयत्न किया। मगर बेप्पो उसे छोड़ने के लिए राजी न हुआ।

इस डेढ़ साल के भीतर दुनिया का एक भी व्यक्ति नहीं मरा। आज, कल या मिनटों में मरनेवाले व्यक्ति भी ज़िंदा रह गये। कई दुर्घटनाएँ व लड़ाइयाँ हुईं, पर एक भी न मरा।

मृत्यु ने बेप्पो को अनेक प्रकार से समझाया कि मौत के बिना दुनिया नहीं चलती; बूढ़े भी होते हैं, दीर्घ काल के

रोगी होते हैं, बड़ी निकृष्ट जिंदगी बितानेवाले भी होते हैं; उनकी मुक्ति का मार्ग मौत ही होता है। मौत के विना प्राणी पैदा होते जायेंगे, तो उन्हें धरती पर जगह तक न होगी। बेप्पो को मानना पड़ा कि मृत्यु की बातों में सचाई है। उसने मृत्यु से यह वादा कराया कि उसके बुलाने पर ही मृत्यु उसके पास पटकेगा, वरना नहीं, तब बेप्पो ने मृत्यु को थैले से मुक्त किया।

थैले से मुक्त होते ही मृत्यु अपने बचे हुये कार्य को जल्दी-जल्दी पूरा करने लगा। सारे संसार में भयंकर युद्ध, विष-व्याधियाँ तथा अन्यान्य दुर्घटनाऐं होने लगीं। कुछ ही महीनों में करोड़ों लोग मर गये।

इसके बाद बेप्पो कई साल जिंदा रहा। जिंदगी से वह ऊब उठा। उसके मित्र ही नहीं बल्कि उनके पुत्र तथा पोते भी मर गये। राजा तथा उनकी पुत्री का देहांत भी कभी हो गया था। इसलिए उसने अपने नौकर के द्वारा मृत्यु के पास खबर भेजी कि उसे भी ले जावे।

"मैं बेप्पो के पास तक नहीं आऊँगा।" मृत्यु ने जवाब दिया।

"यह मृत्यु कैसा नमक हराम है। उसको मैं थैले में ही रखता तो मेरी बात मान लेता।" बेप्पो ने मन में सोचा।

बेप्पो ने निश्चय किया कि 'मृत्यु' ने उसके शरीर से आत्मा को अलग करने से इनकार किया है। इसलिए उसे शरीर के साथ ही स्वर्ग या नरक जाना पड़ेगा, पर उसने यह न सोचा कि स्वर्ग में उसे स्थान सुरक्षित होगा। इसलिए सीधे नरक में जाकर नरक का दर्वाजा खटखटाया।

जब शैतान को मालूम हुआ कि बेप्पो नरक में प्रवेश करनेवाला है, तब

उसने अपने भटों को आदेश दिया–"उसे भीतर न आने दो, मार-मारकर भगा दो।" शैतान के भटों ने वैसा ही किया।

बेप्पो ने निर्णय किया कि अब उसे स्वर्ग में जाने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं है, तब स्वर्ग जाकर वहाँ के द्वारपाल से पूछा कि उसे भीतर जाने दे।

"मैं भगवान से पूछ के आता हूँ, थोड़ा ठहर जाओ।" यह कहकर द्वारपाल भीतर चला गया। मौक़ा पाकर बेप्पो ने स्वर्ग की चहार दीवारी पर से अपनी टोपी को उद्यान में गिरा दिया।

द्वारपाल ने लौट कर बताया–"तुमको भगवान ने भीतर आने से मना किया है। तुमने शैतान को मारकर अच्छा काम ही किया, इस से तुमको स्वर्ग में प्रवेश करने की अनुमति नहीं मिल सकती। तुम्हारी हालत सोचनीय है। लेकिन क्या किया जाय, क़ानून का उल्लंघन तो नहीं किया जा सकता।"

"अच्छी बात है। मैं अपना मार्ग आप ढूंढ़ लूंगा। लेकिन मेरी टोपी भीतर गिर गयी है, ज़रा उसे लाने दो।" बेप्पो ने पूछा।

"अच्छा! ले जाओ।" द्वारपाल ने कहा।

बेप्पो स्वर्ग में जाकर अपनी टोपी पर बैठ गया। वह हिला नहीं। "मैं अपनी वस्तु पर बैठ गया हूँ। क़ानून की दृष्टि से जायदाद से पवित्र वस्तु क्या है? इस पर से तुम लोग मुझे हटा नहीं सकते।" बेप्पो ने द्वारपाल को समझाया।

द्वारपाल ने यह बात भगवान से बतायी। भगवान ने द्वारपाल को आज्ञा दी–"स्वर्ग में किसी को एक इंच भर ज़मीन भी मिल जाती है तो उसका मतलब है कि उसे सारा स्वर्ग मिल गया है। क्योंकि स्वर्ग में बंटवारा नहीं हो सकता। उसे स्वर्ग में ही रहने दो।"

सास और बहू

एक गाँव में धनिया नामक एक औरत थी। उसके एक लड़का था। जब वह बड़ा हुआ, तब धनिया ने एक सुंदर कन्या के साथ उसकी शादी की। बहू कुछ ही दिनों में ससुराल आ गयी।

एक कहावत है कि 'जिसके सास नहीं, वह भाग्यशालिनी है।' इसलिए बहू सोचने लगी कि उसकी सास मर जायगी तो वह अपने पति के साथ आराम से गृहस्थी चला सकती है। यह सोचकर बहू ने एक दिन अपनी सास से पूछा–"सासजी, मैं तो अब गृहस्थी का सारा भार संभालती हूँ, तुम मर क्यों नहीं जाती! तुम्हारी क्या ज़रूरत है?"

"अरी, मैं मर जाऊँगी, लेकिन मेरी एक इच्छा है! तुम्हारे गर्भ से एक लड़का पैदा हो जाय तो उसे भर आँख देख कर मर जाऊँगी।" सास ने जवाब दिया।

"बस, थोड़े ही दिन ही तो हैं।" यह सोचकर बहू बहुत खुश हुई। कुछ महीने बाद बहू गर्भवती हुई और समय पर उसने एक लड़के का जन्म दिया। अपने पोते को गोद में ले धनिया बहुत प्रसन्न हुई।

"सासजी, तुमने अपने पोते को देख लिया है न? अब क्यों न मर जाती?" बहू ने पूछा।

"ज़रा और सब्र करो, बहू! पोते के खेलते-कूदते देख लूँ! उसका अक्षराभ्यास हो जाने दो, फिर मर जाऊँगी!" सास ने समझाया।

पाँच साल बीत गये। पोते का अक्षराभ्यास हुआ। वह पाठशाला में भेजा गया।

"अब तुम मर जाओ, सासजी!" बहू ने सास को याद दिलाया।

"अरी, पोते का उपनयन हो जाने दो न? मैं ज़रूर मर जाऊँगी।" सास ने बहू से कहा।

हेमलता वर्मा

कुछ समय बाद पोते का उपनयन कराया गया। "उपनयन भी हो गया, अब क्यों नहीं मर जाती?" बहू ने सास से कहा।

"अरी, पोते की शादी देख इस बार ज़रूर मर जाऊँगी!" सास ने कहा।

पोता शादी के योग्य हुआ। एक अच्छा संबंध देख उसका विवाह भी किया गया।

"सासजी, तुमने अपने पोते की शादी भी देखी! अब तुमको मर जाना चाहिए।" बहू ने ज़ोर दिया।

"अरी, एक और इच्छा रह गयी, पोता अपनी औरत के साथ तोते-मैंने की तरह गृहस्थी चलाते देख मर जाना चाहती हूँ!" धनिया ने कहा।

पोते की औरत भी ससुराल आ गयी। धनिया की बहू भी अब सास बन गयी।

एक दिन धनिया ने अपनी बहू को बुलाकर कहा–"अरी बहू! अब मेरी सारी इच्छाएँ पूरी हो गयी हैं! मैं मरना चहाती हूँ! अब तुम्हारी बहू भी तो गृहस्थी का भार संभालने आ गयी है! तुम्हारी भी ज़रूरत नहीं रही। वह अपना घर संभाल लेगी! हम दोनों मिलकर एक साथ मर जायेंगी। तैयार हो जाओ!"

बहू का कलेजा धड़कने लगा। वह सोचने लगी–"भगवन, मैं भी कैसे खतरे में फँस गयी।" यह सोचकर बहू ने अपनी सास से कहा–"सासजी, यह सुनकर मुझे बड़ा दुख होता है कि तुम मर जाना चाहती हो, मेरी बात सुनो, तुम ज़िंदा ही रहो! तुम्हें किस बात की कमी है? घर का सारा काम मेरी बहू संभालती है। मैं तुम्हारी सेवा करूँगी। मेरी प्रार्थना सुनो।" बहू रोने लगी।

धनिया अपनी बहू के मन में यह परिवर्तन देख मन ही मन हँस पड़ी। वह अपनी बहू के साथ सारी सेवाएँ कराते शेष दिन आराम से बिताने लगी।

धूर्त बुढ़िया

[४]

कोत्वाल अहमद की कठिनाइयाँ इस से दूर न हुईं। जीनाब से धोखा खाकर अहमद अपने चालीस भटों के साथ पोशाकें खोकर, जांघिये मात्र पहने गलियों से होकर चल रहा था, तभी दूसरे कोत्वाल हसन की दृष्टि उस पर पड़ी।

अहमद की इस बुरी हालत को देख हसन मन ही मन खुश हुआ, लेकिन प्रकट रूप में उसने पूछा–"अहमद, यह क्या है? बड़े सवेरे इस ठण्डी हवा में सिर्फ़ जांघिये पहन कर घूमना क्या तबीयत के लिए ठीक है?"

"कठिनाइयाँ सबको होती हैं, हसन! भाग्य से बचना बड़े-बड़ों के लिए भी संभव नहीं। मैं एक युवती के हाथों में धोखा खा गया। क्या तुम उसका पता जानते हो?" अहमद ने पूछा।

"मैं उस युवती को ही नहीं, उसकी माँ को भी जानता हूँ। क्या मैं उन्हें बंदी बनाऊँ?" हसन ने पूछा।

"यह कैसे मुमकिन होगा?" अहमद ने अचरज में आकर पूछा।

"इस में कौन बड़ी बात है? तुम खलीफ़ा के पास जाकर कह दो कि तुम बूढ़ी को क़ैद न कर सकोगे और इस काम के लिए वे मुझे नियुक्त करें।" हसन ने सलाह दी। अहमद ने अपने घर जाकर पोशाकें पहनीं। खलीफ़ा के पास जाकर बिनती की कि बूढ़ी को पकड़ना उसके लिए संभव नहीं, इसलिए हसन को यह भार सौंप दे।

खलीफ़ा ने हसन को बुलवा कर पूछा– "क्या तुम उस बूढ़ी को जानते हो? उसे क़ैद कर सकते हो?"

गुलशन राय

"मैं उस बूढ़ी को जानता हूँ। लेकिन मैं यह नहीं मान सकता कि उसने धन के लोभ में पड़कर ये सब चोरियाँ की हैं। शायद वह अपनी शक्ति और सामर्थ्य का हुज़ूर को परिचय कराने के लिए ही ये चोरियाँ करती होगी। इस लिए जब वह चोरी की सारी चीज़ें उनके मालिकों को सौंप देगी, तब आपको उसे माफ़ करना होगा। अगर आप ऐसा वादा करेंगे तो मैं उसको आपके सामने हाज़िर कर सकता हूँ।" हसन ने कहा।

खलीफ़ा ने यह वादा किया कि अगर बूढ़ी सभी चीज़ें उनके मालिकों को सौंप देगी, तो वह उसे माफ़ कर देगा।

हसन ने दिलैला के घर जाकर दर्वाज़ा खटखटाया। जीनाब ने दर्वाज़ा खोला।

"मैं तुम्हारी माँ को खलीफ़ा के पास ले जाने आया हूँ। उसको खलीफ़ा साहब बुला रहे हैं। उन्होंने तुम्हारी माँ को यह वादा किया है, लो पढ़ो, तुम्हारी माँ ने जो जो चीज़ें चुरायी हैं, उन सब सामानों को घोड़ों पर लदवा दो।" हसन ने जीनाब से कहा।

दिलैला महल से उतर आयी। उसने जिन चीज़ों की चोरी की थीं, वे सब घोड़ों पर लदवा दी गयीं। खलीफ़ा के पास जाने के लिए तैयार हो गयी।

"तुम ने जो जो माल चुराया, वह सब आ गया है न?" हसन ने दिलैला से पूछा।

"अहमद और उसके भटों ने जो पोशाकें पहनी थीं, उनको छोड़ मैंने सारी चीज़ें वापस कर दी है। वास्तव में उस चोरी के साथ मेरा कोई संबंध नहीं।" दिलैला ने हसन से कहा।

हसन ने हंसकर कहा–"हाँ, हाँ! वह किसी दूसरे का काम है।"

थोड़ी देर में दिलैला और हसन दरबार में हाजिर हुए। दिलैला को देखते ही खलीफ़ा आग बबूला हो उठा। उसकी चोरियों की याद कर खलीफ़ा ने अपने भटों को आदेश दिया कि वे दिलैला का सर काट दे।

हसन ने खलीफ़ा को उसके वादा का स्मरण दिलाया। तब खलीफ़ा ने शांत होकर उस बूढ़ी से पूछा–"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम दिलैला है। कबूतरों की डाक चलाने वाले अधिकारी की औरत हूँ मैं।" दिलैला ने जवाब दिया।

"तुम देखने में योग्य मालूम होती हो। लेकिन इन सब को तुम्हें क्यों धोखा देना पड़ा?" खलीफ़ा ने फिर पूछा।

दिलैला ने खलीफ़ा के सामने घुटने टेक कर बिनती की–"हुज़ूर! मुझे माफ़ कीजिये। मैंने धन के लोभ में पड़कर ये चोरियाँ नहीं कीं, मैंने जब हुज़ूर से निवेदन किया कि मेरे पति द्वारा चलायी जाने वाली कबूतरों की डाक में चला सकती हूँ, तब आपने मुझे अनुमति नहीं दी। मगर आपने प्रसिद्ध डाकू हसन और अहमद को ऊँचे पद दे दिये। मैंने इस आशा से ये सब चोरियाँ कीं कि
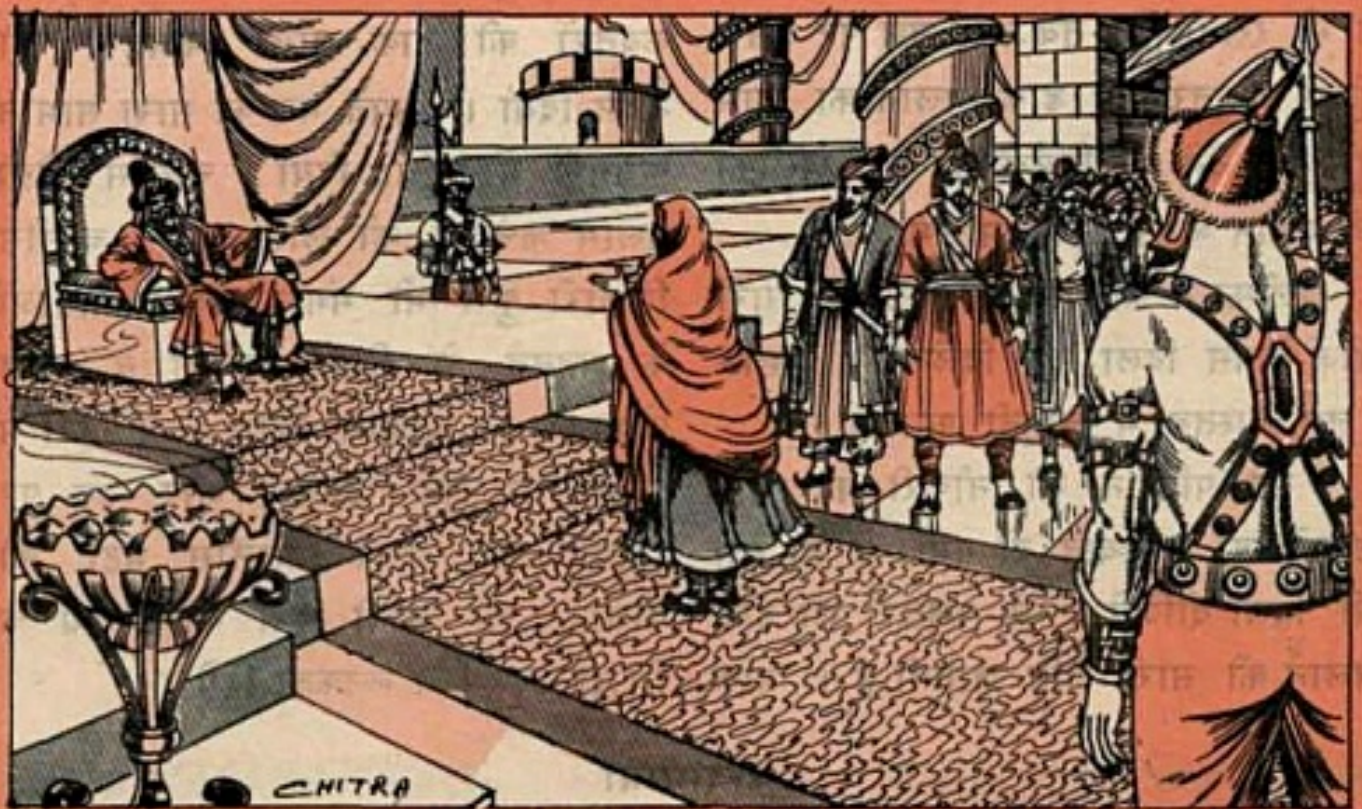
में इन चोरियों के द्वारा यह साबित करूँ कि वे जो सामर्थ्य रखते हैं, वह मैं भी रखती हूँ। तब आप मुझ पर प्रसन्न होकर कबूतरों की डाक चलाने का काम मुझे सौंप देंगे।" दिलैला की बातें खलीफ़ा को यक़ीन करने लायक़ मालूम हुईं।

खलीफ़ा ने फ़रियादों को उनकी सारी चीजें वापस दिला कर दिलैला से पूछा– "तुम वास्तव में चाहती क्या हो?"

"मेरे पति ने जो नौकरी की और उनको जो तनख्वाह दी गयी, वे ही मुझे भी दिला दीजिये। मैं कबूतरों की डाक चलाने की सारी रीति जानती हूँ। डाक की कबूतरों को मैंने और मेरी बेटी ने ही पाले थे। कबूतरों की डाक चलाने के लिए हुजूर ने एक कचहरी का इंतज़ाम किया था और उसकी रक्षा के लिए चालीस नीग्रो गुलाम और चालीस शिकारी कुत्ते भी दिये थे। उस कचहरी को मेरे पति ने नहीं चलाया था, मैंने चलाया था। इसलिए यह काम संभालना मेरे लिए कोई नामुमक़िन नहीं है।" दिलैला ने निवेदन किया।

खलीफ़ा को दिलैला की मांग उचित ही प्रतीत हुई। दिलैला को कबूतरों की डाक चलाने की संचालिका नियुक्त करते हुये खलीफ़ा ने आदेश-पत्र ज़ारी किये।

उस दिन दिलैला ने अपना मुकाम कबूतरों की डाक वाली कचहरी को बदल दिया। अपने घर का सारा सामान कचहरी में पहुँचा दिया। चालीस नीग्रो गुलाम कचहरी को लौट आये। चालीस शिकारी कुत्ते भी मंगाये गये। नीग्रोओं के पहनने के लिए दिलैला ने लाल पोशाकों का इंतज़ाम किया। कचहरी में इकतालीस खूंटे टंगवाये और उन पर अहमद तथा उसके चालीस भटों की पोशाकों को अपनी पुत्री की विजय के चिह्नों के रूप में लटकवा दिये।

दिलैला रोज़ पुरुषों की पोशाकें तथा सर पर चांदी के कबूतर वाली सोने की टोपी धारण करती और राजभवन में जाकर, डाक भेजने के लिए ज़रूरी संदेश ले आती थी। इस तरह माँ और बेटी के दिन आराम से कटने लगे।

इन घटनाओं के थोड़े दिन बाद कैरो से एक युवक बगदाद नगर में आया। उसका असली नाम अली था। मगर उसके "पारा" नामक एक दूसरा उपनाम था। वह बड़ा सुंदर जवान था, मगर अव्वल दर्जे का लुटेरा था।

फिलहाल बगदाद में जो अहमद कोत्वाल के पद पर रहता है, वह जब कैरो में बड़े लुटेरे के रूप में मशहूर था, तब "पारा" ने उसी के यहाँ चोरी करने का प्रशिक्षण प्राप्त किया था। अहमद कैरो को छोड़ बगदाद पहुँचा, वहाँ पर लुटेरे के रूप में जब मशहूर हुआ, तब अली कैरो में लुटेरे के रूप में उतना ही प्रसिद्ध हो गया। वह कई बार पकड़ा गया, लेकिन बड़ी आसानी से छूट गया, इसलिए उसका नाम "पारा" पड़ गया।

"पारा" उर्फ़ अली को कोत्वाल अहमद ने ही बगदाद बुला भेजा।
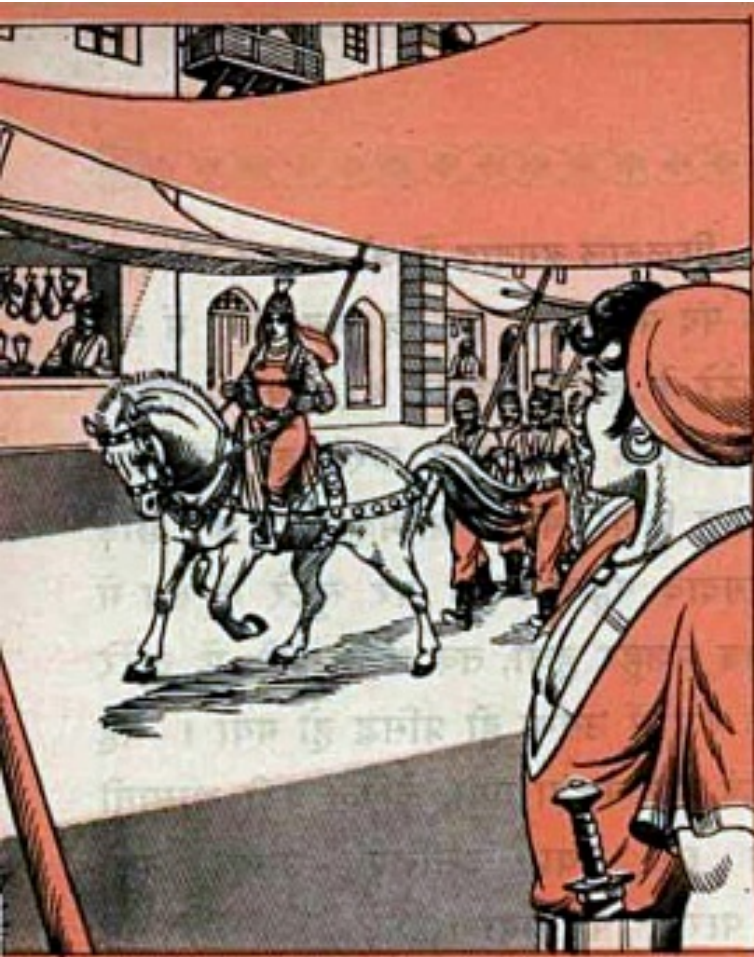
"पारा" बगदाद पहुँचते ही सीधे अहमद के घर चला आया। उसे देखते ही मानो अहमद की जान में जान आ गयी।

"भाई, तुमको मेरे घर में कुछ दिन गुप्त रूप से रहना होगा। तुम से एक बहुत बड़ा काम आ पड़ा है। इसके पूरा होने के बाद तुमको मैं खलीफ़ा के पास खुद ले जाऊँगा और सिफ़ारिश करके बढ़िया नौकरी दिलाऊँगा।" अहमद ने "पारा" से कहा।

अहमद के घर "पारा" ने दो दिन गुप्तरूप से बिताया, तब बाहर जाने को उसका मन छटपटाने लगा। उसे लगा कि मानों क़ैद में रखा गया हो! इसलिए तीसरे दिन जब अहमद राजमहल में गया, तब "पारा" बगदाद घूम आने के ख्याल से घर से निकल पड़ा।

"पारा" गली में से थोड़ी दूर गया ही था कि उसे एक विचित्र दृश्य दिखाई पड़ा। एक बूढ़ी पुरुष की पोशाकें तथा सर पर चाँदी के कबूतरवाली सोने की टोपी पहने घोड़े पर चली जा रही है। उसके पीछे लाल ज़री के कपड़े पहने हुए नीग्रो जा रहे हैं। वह बूढ़ी दिलैला थी। नीग्रो उसके नौकर थे। उस दिन सवेरे

दिलैला को क़ैद करने के प्रयत्न में अहमद जीनाब के हाथों में फँस कर बुरी तरह से अपमानित हुआ, तब से वह हर क्षण "पारा" का स्मरण करने लगा। कैरो में "पारा" उसका दायाँ हाथ बन कर रहा था। अगर वह यहाँ भी उसके साथ रहता तो वह इस तरह अपमानित न होता। वह अब दिलैला के साथ खुद बदला लेने की हालत में न था। इस वक़्त उसका ओहदा भी अहमद के ओहदे से किसी प्रकार कम नहीं। इसलिए अहमद ने "पारा" के द्वारा दिलैला से बदला लेने उसे बुला भेजा।

दिलैला राजमहल जाकर कबूतरों द्वारा भेजी जानेवाली सारी डाक इकट्ठा करके अपने घर लौट रही थी।

दिलैला ने "पारा" उर्फ़ अली को देखा। उसके सौंदर्य पर वह चकित रह गयी। लेकिन उसकी आँखों में दिलैला को अहमद के कुछ लक्षण दिखाई दिये। इसका एक कारण है। अहमद से शिक्षण पाते समय "पारा" ने अज्ञात ही अहमद की भांति देखना, मुँह बनाना वग़ैरह आदतें सीख लीं। अलावा इसके दिलैला ने यह भी भांप लिया कि "पारा" अहमद के घर की तरफ़ से ही आ रहा है।

दिलैला ने घर पहुँच कर अपनी बेटी से उस युवक का वृत्तांत बताया और कहा–"मेरा संदेह है कि कोत्वाल अहमद ने इस नये युवक को कहीं से बुला भेजा है। वह नगर को विचित्र ढंग से देख रहा है। वह कोई अजनबी है। इसलिए हमको बहुत सावधान रहना चाहिए।"

"माँ, तुम बड़े-बड़े चोर-डाकुओं की परवाह नहीं करती हो! इस मामूली युवक को देख घबराती क्यों हो? इसकी बात मैं देख लूँगी।" जीनाब ने कहा। जीनाब ने सुंदर वस्त्र धारण कर आँखों में काजल लगाया। घूंघट डालकर हाथ में थैली ले गली में घुस पड़ी।
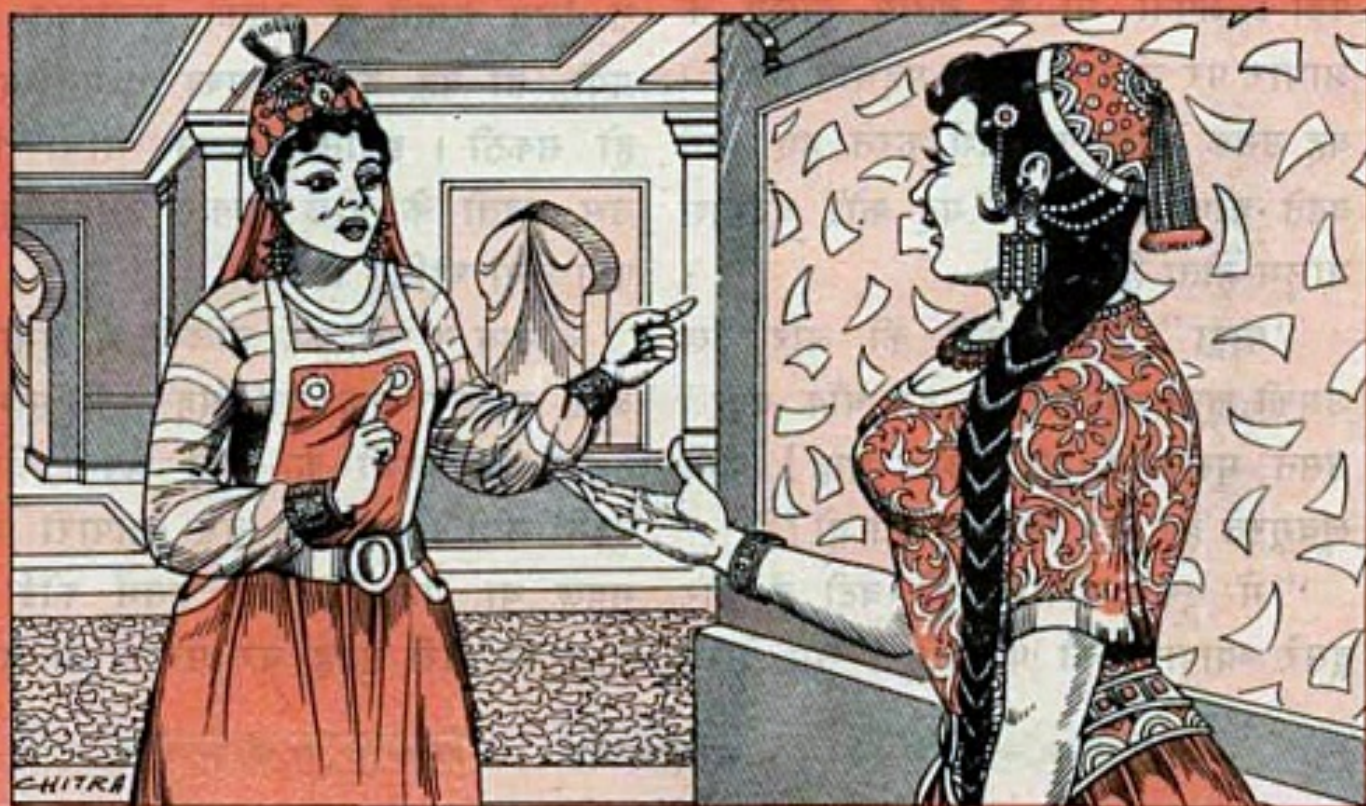
गली में से थोड़ी दूर चलने पर उसे एक दूकान पर "पारा" उर्फ़ अली दिखाई पड़ा। अपनी माँ के बताये हुलिये के आधार पर जीनाब ने उसे पहचान लिया। वह उसके शरीर का स्पर्श करते हुए आगे बढ़ते क्रोध में बोली—"यह कोई बदमाश मालूम होता है!"

"पारा" उस युवती की ओर देख उसकी खूबसूरती पर एक दम चौंक गया। उसने मुस्कुराते हुए पूछा—"वाह! कैसी खूबसूरत है! तुम किसकी बेटी हो?"

"मैं एक व्यापारी की बेटी हूँ और दूसरे व्यापारी की पत्नी हूँ। तुम देखने में इस शहर के लिए नये से लगते हो। तुम रहते कहाँ हो?" जीनाब ने पूछा।

वह अहमद के घर गुप्तरूप से रहता था, इसलिए उसने कहा—"मैंने अभी तक कहीं बसेरा नहीं ढूंढ़ा।"

"तब तो मेरे घर चलो। हमारा घर बहुत बड़ा है। मेरे पति दूकान पर जाते हैं, तो मैं अकेली घर रहती हूँ।" जीनाब ने कहा।

"पारा" ने यह सोचकर पहले संकोच किया कि उस युवती का स्वागत स्वीकार करना शायद उचित नहीं है। लेकिन उसे इस नगर में कोई नहीं जानता था। संयोग से जिस युवती से उसकी मुलाक़ात हो गयी, तो वह कभी उसका दुश्मन नहीं हो सकती। इसलिए उसने सोचा कि उस युवती के पीछे जाकर उसका पूरा पता लेना चाहिए।

जीनाब ने उसे कई गलियों में घुमाया और आख़िर एक बड़े महल के सामने ठहर कर चाभी के वास्ते अपनी थैली ढूंढ़ने लगी। वह एक बड़े व्यापारी का महल था, पर फिलहाल उसमें कोई न था। व्यापारी सुबह घर पर ताला लगा

कर दूकान जाता है तो वह रात तक नहीं लौटता। यह बात जीनाब अच्छी तरह से जानती थी।

"ओह, चाभी कहीं खो गयी है! अब क्या करना होगा? क्या तुम ताला खोल सकते हो?" जीनाब ने "पारा" से पूछा।

उस बड़े ताले को "पारा" ने पल-भर में खोल दिया। उसकी इस चातुरी को देख जीनाब ने निर्णय किया कि वह अवश्य अव्वल दर्जे का लुटेरा है।

दर्वाज़ों के खुलते ही दोनों भीतर पहुँचे। "तुम इस कमरे में बैठ जाओ, मैं कुएँ से पानी लाकर रसोई बनाऊँगी।" यह कहते जीनाब गगरी ले पिछवाड़े की ओर चली गयी।

थोड़ी देर बाद जीनाब पिछवाड़े से चिल्ला पड़ी। उसकी चिल्लाहट सुनकर "पारा" दौड़े-दौड़े पिछवाड़े में भाग गया। जीनाब कुएँ में झांक रही थी।

"क्या हुआ?" "पारा" ने पूछा।

"मेरी हीरे की अंगूठी कुएँ में गिर गयी। मेरे पति ने कल ही इसे पाँच सौ दीनारों में खरीदी थी। मैंने उसी वक़्त बताया कि यह अंगूठी ढीली है। मेरे पति को मालूम होगा तो मेरी जान लेंगे।" जीनाब रोने लगी।

"मैं अभी कुएँ में उतरकर उसे निकाल लेता हूँ।" "पारा" ने समझाया।

कुएँ की घिरनी पर रस्सी बांधे "पारा" कुएँ में उतर पड़ा। वह रस्सी को छोड़ पानी में डबकी लगाने लगा। तब जीनाब ने रस्सी को ऊपर खींचकर कहा–"अहमद के आकर तुमको बाहर निकालने तक तुम कुएँ में ही रहो।" ये शब्द कहते जीनाब "पारा" की पोशाक लिए अपने घर चली गयी। (और है)

थोड़ा और

एक अमीर शहर से बहुत से सामान ख़रीद कर गाँव लौट रहा था। रास्ते में थकावट मिटाने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठ गया। जब फिर निकला, तब वह अपनी भारी गठरी सर पर उठा न पाया।

तभी उधर से एक लड़का आ निकका। अमीर ने उस लड़के को बुलाकर पूछा– "ऐ लड़के, जरा गठरी उठाओ तो, मैं तुम्हें थोड़ा गुड़ देता हूँ।"

लड़के ने कहा–"थोड़ा गुड़ नहीं, थोड़ा और गुड़ देना होगा।"

अमीर ने मान लिया। लड़के की मदद से गठरी उठाकर घर पहुँचा। थोड़ा गुड़ तोड़कर वह लड़के को देने लगा।

"थोड़ा और चाहिये।" लड़के ने कहा। इस पर अमीर थोड़ा और बड़ा टुकड़ा तोड़कर देने लगा।

"थोड़ा और!" लड़के ने फिर पूछा।

अमीर ने थोड़ा-थोड़ा करके सारा गुड़ तोड़कर लड़के को दे दिया। इस पर भी लड़का "थोड़ा और" पूछने लगा। अमीर उस पर नाराज हो गया। लेकिन लड़के ने इसकी परवाह न की। उसने कहा–"मैंने थोड़ा और मांगा था? तुमने देने को मान लिया। अब तुम अपनी बात से मुकर रहे हो।"

उसी वक़्त एक बुजुर्ग वहाँ आ पहुँचा। उसने दोनों की बातें सुनीं। तब उसने गुड़ का एक छोटा टुकड़ा और एक बड़ा टुकड़ा करके लड़के से पूछा–"इनमें किसे तुम 'थोड़ा और' मानते हो?"

लड़के ने बड़े टुकड़े को दिखाया।

"तब तो तुम उसी को लेकर अपने रास्ते से चलते बनो।" बुजुर्ग ने समझाया। लड़का अपना-सा मुँह लेकर वहाँ से चला गया।

भेरुण्ड

पुराने ज़माने में एक राजा था। उसके एक पुत्री थी। वह हमेशा बीमार रहती थी। कई वैद्यों ने आकर इलाज किया, लेकिन बीमारी दूर नहीं हुई।

एक ज्योतिषी ने बताया–"पवित्र दाडिम खाने से राजकुमारी चंगी हो जायगी।" लेकिन कोई यह नहीं जानता था कि पवित्र दाड़िम कैसा होता है?

उसी शहर में एक अमीर किसान था। वह कभी सच बोलता न था। उसके तीन बेटे थे। बड़े लड़के दोनों चालाक थे। इसलिए वे भी कभी सच बोलते न थे। तीसरा लड़का शेखर उन दोनों के बिलकुल उलटा था। वह हमेशा सच ही बोलता था। इसलिए पिता और बड़े भाई उसे नालायक़ समझते थे।

एक दिन राजा ने सारे शहर में ढिंढोरा पिटवाया कि जो आदमी पवित्र दाड़िम लाकर राजकुमारी को चंगा करेगा, उसके साथ राजकुमारी का विवाह किया जायगा। अमीर किसान ने अपने बड़े पुत्र को बुलाकर कहा–

"दाड़िम में पवित्र और अपवित्र थोड़े ही होते हैं? हमारे पिछवाड़े में बढ़िया दाड़िम हैं, तुम दो दाड़िम ले जाकर राजा को दो और राजकुमारी के साथ शादी करो।"

बड़ा पुत्र दो दाड़िम तोड़ कर एक ठोकरी में रखकर राजमहल की ओर चल पड़ा। रास्ते में एक लोहे के कुर्तेवाला आदमी दिखाई पड़ा। उसने पूछा–"अरे भाई, ठोकरी में क्या हैं?"

"मेंढकें हैं!" बड़े लड़के ने जवाब दिया। "बस, ऐसे ही हो जायें।" लोहे के कुर्तेवाले ने कहा।

अमीर के बड़े पुत्र ने राजमहल में जाकर ठोकरी खोल दी, फिर क्या था,

इन्द्रकुमार कश्यप

ठोकरी में से दो मेंढ़कें बाहर कूद पड़े। यह देख राजभटों ने उसे मार भगाया।

दूसरे दिन अमीर किसान का दूसरा बेटा दाड़िम लेकर चल पड़ा। लोहे के कुर्तेवाले ने रास्ते में जाते हुये दूसरे बेटे से पूछा—"ठोकरी में क्या हैं?"

"केकड़े हैं!" दूसरे ने जवाब दिया।

"बस, ऐसे ही हो जायें!" लोहे के कुर्तेवाले ने जवाब दिया।

दूसरे बेटे ने राजमहल पहुँच कर ठोकरी खोल दी तो देखता क्या है, उस में दो केकड़े इधर-उधर भाग रहे हैं। राजभटों ने दूसरे बेटे को मार भगाया।

तीसरे बेटे शेखर ने अपने पिता से पूछा—"मैं भी दाड़िम लेकर राजमहल जाऊँगा।"

"अरे, तुम्हारे बड़े भाइयों के ज़रिये जो काम न बन सका, वह तुम्हारे द्वारा थोड़े ही होगा? तुम भी जाकर मार खाकर लौट आओ।" पिता ने कहा।

शेखर दो दाड़िम ले निकल पड़ा। लोहे के कुर्तेवाले ने रास्ते में उसे भी रोककर पूछा—"ठोकरी में क्या है?"

"राजकुमारी के इलाज के लिए दाड़िम ले जा रहा हूँ।" शेखर ने जवाब दिया। "बस, ऐसा ही हो।" लोहे के कुर्तेवाले ने कहा।

शेखर ने राजमहल में पहुँच कर ठोकरी खोल कर देखा तो उसमें दो दाड़िम थे। राजभटों ने उनको राजकुमारी के पास भेजा। थोड़ी ही देर में राजकुमारी बिलकुल चंगी हो गयी और उछलते-कूदते राजा के पास आ पहुँची।

"महाराज, अब राजकुमारी के साथ मेरा विवाह कीजिये।" शेखर ने पूछा।

"अरे, इतनी जल्दी? तुम भेरुण्ड पक्षी का पर लेते आओ, तभी राजकुमारी के साथ तुम्हारा विवाह होगा।" राजा ने

कहा। "ऐसा ही लाऊँगा, महाराज!" यह कहकर शेखर वहाँ से निकल पड़ा।

राजा ने यह सोचकर संतोष किया कि "पिंड छूट गया है।"

शेखर भेरुण्ड पक्षीवाले टापू की ओर रवाना हुआ। उस रात को वह एक शहर में पहुँचा और उस शहर के राजा के घर रात को मेहमान बना रहा।

"अरे, तुम भेरुण्ड को देखने जाते हो? सुनते हैं कि वह सारे रहस्य जानता है। साथ ही जरा यह भी पता लगा आओ कि हमारे खज़ाने की चाभी खो गयी है। वह कहाँ पर है?" राजा ने शेखर से कहा। शेखर ने मान लिया।

दूसरे दिन रात को शेखर एक दूसरे शहर के राजा के घर ठहरा। उस राजा ने पूछा–"शेखर! जब तुम भेरुण्ड से मिलोगे तब उससे पता लगा आओ कि मेरी पुत्री की बीमारी की दवा क्या है?"

शेखर ने इसे भी मान लिया।

तीसरे दिन दुपहर तक शेखर समुद्र के किनारे पहुँचा। भेरुण्ड वाला टापू समुद्र में चार मील की दूरी पर था। वहाँ एक राक्षस मनुष्यों को उठा ले जाकर समुद्र पार कराता रहता है।

डालेगा। इसलिए तुम यहाँ से जल्दी चले जाओ।" उस औरत ने समझाया।

"माई, मैं इतनी दूर जाने के लिए नहीं आया हूँ। मुझे भेरुण्ड पक्षी का पर चाहिये। अलावा इसके तीन लोगों के संदेहों का जवाब जानकर ही यहाँ से जा सकता हूँ।" इन शब्दों के साथ शेखर ने अपनी सारी कहानी उस औरत को सुनायी। और साथ ही दो राजाओं तथा राक्षस के प्रश्न भी सुना दिये।

इसके बाद उस औरत ने शेखर को एक जगह बड़ी सावधानी से छिपा रखा।

थोड़ी देर बाद भेरुण्ड वहाँ आ पहुँचा। उसने आते ही पूछा—"यहाँ तो मनुष्य की गंध आती है! क्या कोई आया है?"

"हाँ, कोई युवक आया था। मज़ाक भरी बातें सुनायीं। मैं ने यह कह कर उसे भेज दिया कि तुम उसको मार डालोगे। वह डर कर चला गया।" औरत ने जवाब दिया।

"युवक ने क्या बताया?" भेरुण्ड ने पूछा।

"कहता है कि एक राजा के खज़ाने की चाभी खो गयी है। इसलिए धन के रहते हुये भी वह बहुत परेशान है।" औरत ने कहा।

राक्षस शेखर को भेरुण्ड वाले टापू को ले जाते हुये शेखर का वृत्तांत जान कर बोला—"मैं मनुष्यों को समुद्र पार कराते मरता जा रहा हूँ। तुम भेरुण्ड से यह पूछ आओ कि मुझे इस काम से छुट्टी कैसे मिल सकती है?"

शेखर ने मान लिया। टापू पर उतरते ही वह दूर दिखाई देने वाले क़िले की ओर चल पड़ा। वह भेरुण्ड का क़िला था।

उस वक़्त क़िले में भेरुण्ड नहीं था, मगर शेखर को एक औरत दिखाई दी।

"तुम कौन हो, बेटा? यहाँ पर क्यों आये हो? अकारण ही तुमको भेरुण्ड खा

"वह तो बेवकूफ़ है! खज़ाने की चाभी गोदाम की देहली के पास ही पड़ी है। हाँ, और क्या बताया?" भेरुण्ड ने पूछा।

"कहता है कि किसी राजा की पुत्री बीमार है। किसी भी दवा से वह चंगी नहीं हो रही है।" औरत ने कहा।

"उस लड़की के उखड़े बालों में साँप ने अण्डे दिये हैं। बालों का गुच्छा सीढ़ियों के नीचे है। अण्डे वहाँ से हटा दे तो उस लड़की की बीमारी अपने आप दूर हो जायगी।" भेरुण्ड ने कहा।

"उस युवक ने यह भी बताया कि सब मनुष्यों को समुद्र पार कराने वाला राक्षस यह कर रोता है कि कब उसे इस काम से छुट्टी मिलेगी?" औरत ने कहा।

"वह भी एक बेवक़ूफ़ ठहरा। एक आदमी को अगर वह बीच समुद्र में फेंक देगा तो उसे छुट्टी मिल जायगी।" भेरुण्ड ने कहा।

इसके बाद भेरुण्ड सो गया। उस औरत ने शेखर को बुलाया। भेरुण्ड पक्षी का एक पर निकाल कर उसके हाथ दें कहा—"अब तुम यहाँ से जल्दी भाग जाओ।"

शेखर जब समुद्र के किनारे पहुँचा, तब राक्षस ने उससे पूछा—"भेरुण्ड ने मेरी बात का क्या जवाब दिया?"

"पहले मुझे समुद्र पार करा दो, तब मैं बताऊँगा।" शेखर ने कहा।

समुद्र पार करने पर शेखर ने राक्षस से कहा–"इस बार जो आदमी यहाँ आयगा, उसे तुम समुद्र में फ़ेंक दो। तुम को इस काम से छुट्टी मिल जायगी।"

शेखर दूसरे राजा के राज्य में पहुँचा। उस राजा से कहा–"आपकी सीढ़ियों के नीचे बालों का गुच्छा है। उसमें साँप के अण्ड़े हैं। उनको गुच्छे से निकाल दो तो तुम्हारी बेटी की तबीयत ठीक हो जायगी।"

अपनी पुत्री की तबीयत के ठीक होते ही राजा ने खुश हो शेखर को एक थैली भर सोना, गायों की एक रेवड़, भेड़ और बकरियों की रेवड़ें भी पुरस्कार में दीं। इसी प्रकार पहले राजा ने भी अपने खज़ाने की चाभी पाकर शेखर को सोना, गायें, भेड़ और बकरियाँ भी इनाम में दीं।

ये सब इनाम लेकर शेखर अपने देश में पहुँचा। राजा के दर्शन कर भेरुण्ड पक्षी का पर उसे सौंप दिया।

"अरे, तुम तो बड़े ही समर्थ व्यक्ति हो। लेकिन ये सब पुरस्कार तुमने कैसे पाये?" राजा ने पूछा। शेखर के साथ सोना, गाय, भेड़ और बकरियों को देख राजा के मन में ईर्ष्या हुई।

"क्या भेरुण्ड को देख आनेवाले को इतना भी लाभ न होगा?" शेखर ने जवाब दिया। लेकिन उसने विवरण नहीं बताये। राजा उसी दिन भेराण्ड को देखने निकल पड़ा। जब वह समुद्र के किनारे पहुँचा तब राक्षस उसे उठाकर चल पड़ा और बीच समुद्र में उसे फेंक कर अपने रास्ते चला गया।

राजा के मरने का समाचार सुनते ही शेखर राजकुमारी के साथ विवाह करके सुख से रहने लगा।

महाभारत

द्वारका के प्रमुख व्यक्ति अंतर्द्वीप में होनेवाले उत्सव को देखने गये थे, इसलिए अर्जुन को सुभद्रा के साथ विवाह करने का अच्छा मौक़ा मिल गया। इसलिए अर्जुन ने अपनी सेवा करने वाली सुभद्रा से कहा–"पिता या भाई के द्वारा कन्यादान करने पर अग्नि को साक्षी बनाकर विवाह किया जाता है। लेकिन अब हमें ऐसा विवाह करने का अवकाश नहीं है। हाँ, प्रेयसी और प्रिय के रूप में हम आज की रात को गांधर्व विवाह कर सकते हैं। इस गांधर्व विवाह के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?"

इस पर सुभद्रा ने कोई जवाब नहीं दिया। वह अपने भाई कृष्ण का स्मरण करने लगी। उसकी आँखें गीली हो गयीं। अर्जुन को लगा कि उसकी इच्छा की पूर्ति नहीं होनेवाली है। इसलिए उसने इन्द्र का स्मरण किया। इन्द्र अपनी पत्नी शचीदेवी को नहीं, बल्कि अरुंधती, नारद, वसिष्ठ, कुछ अन्य देवऋषि तथा अप्सराओं को साथ ले अर्जुन के पास आ पहुँचा।

उसी समय बलराम वगैरह अंतर्द्वीप में सो रहे थे। मौक़ा पाकर कृष्ण अक्रूर, सात्यकी, गद, देवकीदेवी तथा रुक्मिणी को भी साथ ले वहाँ पर आ पहुँचे।

इन्द्र ने कृष्ण से कुशल प्रश्न पूछकर यथाविधि कृष्ण से कहा–"आप मेरे पुत्र अर्जुन को अपनी बहन सुभद्रा को देकर विवाह कीजिये।"

१९. सुभद्रा का विवाह

"इससे बढ़कर हमें चाहिये ही क्या?" यादवों ने कहा। इस पर कृष्ण ने इंद्र को अपनी सम्मति दी।

इन्द्र ने अर्जुन का मंगल स्नान कराया। तदुपरांत सुंदर पुष्पमालाओं, अमूल्य वस्त्र एवं आभूषणों के द्वारा उसका अलंकार करवा कर उसे विवाहमण्डप में ले आया।

इस बीच अरुंधती, शचीदेवी, देवकी, रुक्मिणी आदि ने सुभद्रा का स्नान कराया, अमूल्य आभरणों से उसे अलंकृत कर ले आयीं, तब उसे अर्जुन की बगल में बिठाया। दिकपालों के समक्ष नारद, वसिष्ठ आदि मुनियों के पर्यवेक्षण में शास्त्रीय ढंग से सुभद्रा और अर्जुन का विवाह संपन्न हुआ। विवाह के बाद देवता अपने लोक में चले गये। यादव भी अंतर्द्वीप को लौटने लगे, तब कृष्ण ने अर्जुन से कहा—"अर्जुन, तुम यहाँ बाईस दिन रहो, इसके बाद इस रथ पर सवार हो सुभद्रा के साथ इन्द्रप्रस्थ में चले जाओ।" ये शब्द कहते कृष्ण ने अर्जुन को सैन्य, सुग्रीव, मेघपुष्प तथा वलाहका नामक चार घोड़ों से जुते रथ को दिखाया।

कृष्ण के आदेशानुसार अर्जुन ने बाईस दिन द्वारका में बिताया, तब सुभद्रा से कहा—"मेरे चातुर्मास का व्रत समाप्त हो गया है। इसलिए ब्राह्मणों को भोज देंगे। तुम इसका प्रबंध करो।"

भोज के समाप्त होने पर कृष्ण के रथ को आयुधों के साथ तैयार कराने का अर्जुन ने सुभद्रा को आदेश दिया। सुभद्रा ने वैसा ही कराया। तब अर्जुन सुभद्रा तथा उसकी सहेलियों को रथ पर बिठाकर तेजी के साथ इन्द्रप्रस्थ की ओर चल पड़ा।

यादवों ने अर्जुन को देखा। इस पर कुछ यादव वीरों ने अर्जुन पर बाणों की वर्षा करते हुए कहा—"यह क्या हो रहा

है? अर्जुन सुभद्रा का अपहरण कर ले जा रहा है। उसे रोककर सुभद्रा को छुड़ा लो।" अर्जुन ने उन वीरों पर बाण चलाकर उनको रोक दिया। किसी तरह यादवों से बचकर अपने रथ को रैवतकाद्रि को पार कराया।

यह समाचार जल्द ही अंतर्द्वीप में पहुँचा। यह निश्चित रूप से मालूम हुआ कि अर्जुन ही सुभद्रा को उठा ले जा रहा है। वहाँ के यादव वीरों ने सलाह दी कि अर्जुन के पीछे सेनाओं को भेजकर उसे हराया जाय और सुभद्रा को वापस लाया जाय।

बलराम ने उनको रोक कर कृष्ण से कहा—"देखते हो न, अर्जुन ने हमारे साथ कैसा द्रोह किया है? बोलते क्यों नहीं? इस अपमान को सहने के बदले मर जाना अच्छा है! तुम मान जाओगे तो मैं खुद जाकर सारे कौरव वंश को खतम करके वापस लौटूंगा।"

इस पर कृष्ण ने बलराम को शांत स्वर में समझाया—"अर्जुन ने हमारे साथ कौन-सा अपचार किया है? हम सुभद्रा को इससे बढ़कर अच्छा वर कहाँ से लानेवाले हैं? राक्षस विवाह न्याय के विरुद्ध नहीं है। आप सब जाकर उसे क्या युद्ध में पराजित कर सकेंगे? इंद्र के लिए भी यह संभव नहीं है। अब आप लोग सोचिये कि अर्जुन के साथ युद्ध करके उसके हाथों में हार खाकर अपयश मोल ले, या उसके साथ समझौता करके मैत्री का संबंध जोड़ ले? मेरे ख्याल से उससे मैत्री करना ही सब प्रकार से उत्तम है!"

कृष्ण की सलाह की सब यादवों ने प्रशंसा की।

अर्जुन सुभद्रा समेत इंद्रप्रस्थ पहुँच गया। अपनी माता और भाइयों को प्रणाम किया, तब द्रौपदी के अंतःपुर में चला गया।

द्रौपदी अर्जुन को देख ईर्ष्या से बोली–"आप सुभद्रा के साथ प्रेमालाप करते द्वारका में ही क्यों नहीं रह गये? राजा लोग तो स्वभाव से ही नूतन प्रिय हैं। अलावा इसके चाहे जितने भी दृढ़ बंधन क्यों न हों, पुराने पड़ने पर टूट जाते हैं। प्रेम सदा स्थाई नहीं रहता।" अर्जुन ने द्रौपदी को उचित रीति से सांत्वना दी।

अर्जुन का इशारा पाकर सुभद्रा ने कुंतीदेवी तथा द्रौपदी को प्रणाम किये। द्रौपदी ने प्रेम से सुभद्रा का आलिंगन कर उसे आशीर्वाद दिया।

इंद्रप्रस्थ में पांडव सुखी थे। एक दिन कृष्ण, बलराम, अक्रूर, उद्धव, सात्यकी, कृतवर्मा, सांब, प्रद्युम्न इत्यादि यादव-प्रमुखों को साथ ले सुभद्रा के लिए स्त्री-धन ले आये। यह समाचार जानकर युधिष्ठिर ने अपने चारों भाइयों को उनकी अगवानी के लिए भेजा। यादवों ने उचित मर्यादाओं के साथ इंद्रप्रस्थ नगर में प्रवेश किया।

यादवों के लाये हुए हजारों हाथी, रथ, घोड़े, दुधारू गायों, स्वर्णाभूषणों को ग्रहण कर युधिष्ठिर ने भी उन्हें उचित उपहार दिये तथा उनको अपने यहाँ कुछ समय तक अतिथि बनाकर रखा। इसके बाद कृष्ण को छोड़ बाक़ी सभी यादव द्वारका नगर को लौट गये।

[कालक्रम में अर्जुन के द्वारा सुभद्रा के एक पुत्र हुआ। उसका नाम अभिमन्यु रखा गया। अभिमन्यु का अर्थ निड़र और क्रोधी है। द्रौपदी ने पाँचों पांडवों द्वारा पाँच पुत्रों का जन्म दिया। वे ही उपपांडव हैं। उनके नाम प्रतिविंध्य, सुतसोम, श्रुतसोम, शतानीक तथा श्रुतसेन थे। इनको अर्जुन ने ही धनुर्विद्या सिखायी। धनुर्विद्या में अभिमन्यु अर्जुन जैसा प्रतापी कहलाया।]
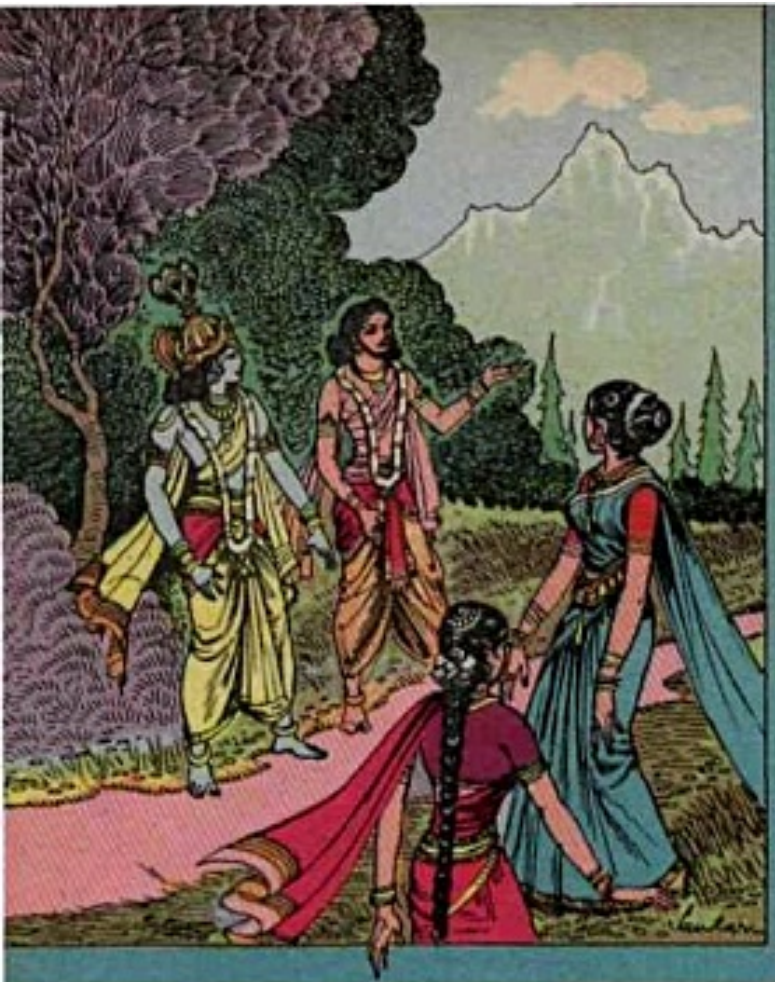
कृष्ण के इन्द्रप्रस्थ में रहते समय भयंकर ग्रीष्म आया। जंगल सब जल गये और गरम लू चलने लगी। सभी नदियाँ सूख गयीं। पश्चिमी लू से सभी प्राणी परेशान हो गये।

उस गरमी में अर्जुन ने कृष्ण से कहा– "यह गरमी असहनीय है। इसलिए यमुना नदी के किनारे स्थित पहाड़ी जंगलों में शिकार खेलते, वहीं पर घर बनाकर थोड़े दिन बिता दें तो कैसा सुखकर होगा? वहाँ पर ठण्डी हवा चलती है।"

कृष्ण ने मान लिया। कृष्ण और अर्जुन अपने कुछ मित्रों तथा परिचारकों को साथ ले जंगल के शीतल प्रदेश में डेरा डाल सुखपूर्वक दिन बिताने लगे। एक दिन उन सब ने खाण्डव वन के समीप में चन्दन-वृक्षों की छाया में झाड़ियों में बैठकर आराम से भोजन किया। कृष्ण और अर्जुन के साथ द्रौपदी तथा सुभद्रा भी गयी थीं। सब लोग अपने शरीरों पर चन्दन का लेप करके पुष्प मालाएँ धारण किये हुए थे। कथा-कहानियाँ सुनते-सुनाते मनोरंजन कर रहे थे।

उस वक़्त एक वृद्ध ब्राह्मण उनके पास आ पहुँचा। उसकी क़द ऊँची थी। उसका शरीर कांतिमान था। वह वल्कल पहने जटाएँ धारण किये हुए था।

उस ब्राह्मण ने उन लोगों से पूछा– "महाशयो, मैं भोजनप्रिय हूँ। हजम करने की ताक़त रखता हूँ। मेरे पसंद का भोजन आप लोग खिलावे तो खाकर मैं संतुष्ट हो जाऊँगा।"

इस पर कृष्ण और अर्जुन ने कहा–"हे विप्रवर, तुम जैसा भोजन चाहते हो, पूछ लो।"

"मैं अग्निहोत्र हूँ। मुझे और किसी प्रकार के भोजन की जरूरत नहीं। मैं केवल इस खांडव वन को भक्षण करने की इच्छा रखता हूँ। मैंने कई बार प्रयत्न भी

किया, लेकिन इन्द्र ने हर बार मूसलधार वर्षा करके मेरे प्रयत्न में बाधा डाली। तक्षक इत्यादि सर्पों की सहायता से इन्द्र सदा इस वन की रक्षा करता आ रहा है। आप जैसे महान वीरों की सहायता से ही मेरा प्रयत्न सफल हो सकता है। इसलिए कृपया आप लोग मेरी सहायता कीजिये।" ब्राह्मण ने निवेदन किया।

अग्निहोत्र ने खांडव वन का दहन करने का अनेक बार प्रयत्न किया है तो इसका कोई खास कारण जरूर होगा।

प्राचीनकाल में श्वेतकी नामक एक राजा था। वह हमेशा यज्ञ किया करता था। एक बार उसने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया। उसमें श्वेतकी की जिन लोगों ने मदद की, उन्हें धुएँ के कारण आँखों की बीमारी हो गयी। श्वेतकी ने उन लोगों के बदले और ब्राह्मणों को बुलवा कर किसी तरह यज्ञ पूरा किया।

लेकिन श्वेतकी ने जब दुबारा यज्ञ प्रारंभ किया, तब सबने इनकार किया। लेकिन बार-बार राजा के निवेदन करने पर उन लोगों ने उपाय बताया-"तुम जो यज्ञ करना चाहते हो, उसके ऋत्विक का काम करना केवल शिवजी को ही संभव है।"

श्वेतकी ने कैलास जाकर शिवजी के प्रति तपस्या की। शिवजी शीघ्र ही प्रत्यक्ष हो गये।

"भगवन, आप मेरे यज्ञ का याजक बनने की कृपा कीजिये।" श्वेतकी ने शिवजी से प्रार्थना की।

"याजक बनने का काम ब्राह्मणों का है। फिर भी तुम बारह वर्ष तक अग्नि की अर्चना करोगे तो तुम्हारी इच्छा की पूर्ति होगी।" ये शब्द कहकर शिवजी अदृश्य हो गये।

श्वेतकी ने शिवजी के कहे अनुसार बारह वर्ष तक अग्नि को घी समर्पित

किया, तब शिवजी के पास लौट आया। इस पर शिवजी ने श्वेतकी से कहा–"मैंने कहा था कि याजक ब्राह्मण ही हो सकता है। मैं नहीं बन सकता। फिर भी मैं अपने अंश द्वारा पैदा हुए दुर्वासा को याजक के रूप में भेज देता हूँ। तुम यज्ञ के लिए आवश्यक सारे प्रयत्न करो।"

श्वेतकी ने यज्ञ के सभी प्रबंध किये। शिवजी ने दुर्वासा को यज्ञ कराने भेजा। दुर्वासा यज्ञ कराकर अपनी दक्षिणा ले चला गया।

आखिर हुआ क्या, घी पी-पीकर अग्निहोत्र को बदहजमी की बीमारी हो गयी। उसका तेज क्षीण होने लगा। उसने ब्रह्मा के पास जाकर अपनी बदहजमी के दूर होने का उपाय बताने की प्रार्थना की।

ब्रह्मा ने आग को देख हँसकर कहा–"तुमने घी पी-पीकर बदहजमी का रोग मोल लिया है। खांडव वन का दहन करोगे तो तुम्हारी बीमारी दूर हो जायगी और तुमको पुनः तेज प्राप्त होगा। खांडव वन में अनेक प्रकार के प्राणी, औषधियाँ, वनस्पतियाँ तथा महावृक्ष हैं। उनके द्वारा तुम्हारी बीमारी दूर हो जायगी।"

ब्रह्मा की बातें सुनकर अग्नि ने खांडव वन में प्रवेश करके उसे जलाना प्रारंभ किया। लेकिन तुरंत जोर की वर्षा होने लगी। उस वक़्त जंगल के हाथी, सर्प आदि भी अपने मुँह से पानी भर लाये और अग्निहोत्र पर डाल दिया। इससे अग्नि का प्रयत्न विफल हो गया।

अग्नि ने सात बार खांडव वन को जलाने का प्रयत्न किया। उसके सातों प्रयत्न बेकार हो गये। इस पर अग्नि ने ब्रह्मा के पास जाकर बताया–"मैं खांडव वन को जला न सका। मेरी बीमारी दूर नहीं हुई!"

बस्रा का नाविक

[२]

थोड़ी देर बाद जहाज़ के यात्रियों को कुछ विचित्र घटनाएँ दिखाई देने लगीं। समुद्र में से स्तम्भ जैसे एक वस्तु ऊपर उठी दिखाई दी। कोई वस्तु बिजली सी चमकी, इससे भी विचित्र बात यह थी कि डांडे चलाये बिना, हवा के न बहने पर भी नौका अपने आप तेज़ी से चलने लगी।

यात्री सब अचरज में आ गये। सब ने अबुल फ़वारिस के पास जाकर पूछा–"हमारी नौका अपने आप बड़ी तेज़ी से कैसे चली जा रही है? इसका कोई कारण भी तो हो?"

अबुल फ़वारिस ने आँख उठाकर देखा। दूर पर उसे एक पहाड़ दिखाई दिया। वह समुद्र में से ऊपर उठा हुआ था। उसे देख आँखें मूंद लीं, बड़ी पीड़ा का अनुभव करते कराहते चिल्ला पड़ा–"हम सब मर गये!"

थोड़ी देर बाद उसने यात्रियों से यों कहा–"मेरे पिता कहा करते थे कि कभी समुद्र में हम रास्ता भटक जाते हैं, तो पतवार को पूरब की ओर घुमाना चाहिए। क्योंकि उनका कहना है कि नौका पश्चिम की ओर आगे बढ़े तो वह 'शेर के मुँह' में चली जायगी। मैंने उनसे पूछा–'शेर का मुँह' क्या है? उन्होंने उत्तर दिया था कि खुदा ने समुद्र के बीच एक बहुत बड़ा बिल बनाया है, उससे सटकर एक पहाड़ होता है। उस बिल का नाम ही 'शेर का मुँह' है। उन्होंने यह भी बताया था कि सौ मील की दूर पर की नौका को भी वह बिल अपनी ओर ज़ोर से खींच लेता है, तब शेर के मुँह में जानेवाली

नौका पहाड़ से टकराकर डूब जाती है। अब लगता है कि हम लोग उसके मुंह में फँस गये हैं। वरना नौका इतनी तेजी के साथ हवा के न बहने पर भी कैसे आगे बढ़ सकती है?"

अपनी नौका को वायुवेग के साथ पहाड़ के समीप जाते देख सभी यात्री भयभीत हो गये। जल्द ही वह नौका भँवर के नजदीक पहुँची। न मालूम उस भँवर में कितनी हज़ार नौकाएँ फँस कर टूट गयी हों! वे सब भँवर में चक्कर काट रही थीं।

सभी यात्रियों ने अबुल फ़वारिस को घेरकर बिनती की—"मेहरबानी करके बताइये, अब हमें क्या करना होगा? कोई ऐसा उपाय कीजिये कि हम लोग बच जायें।"

"नौका पर के सभी रस्सों को उठा ले आइये। मैं भँवर में तैरते जाऊँगा, पहाड़ के पास जाकर किनारे के बड़े पेड़ से नौका को बाँध दूँगा।" अबुल फ़वारिस ने जवाब दिया।

अबुल फ़वारिस समुद्र में कूद पड़ा। तैरता गया। खुश क़िस्मती ने उसे किनारे पर लगा दिया। उसने नौका को किनारे के एक पेड़ से बाँध दिया।

इसके बाद खाने की चीज़ों की खोज करते वह पहाड़ पर चढ़ गया। क्योंकि इधर कुछ दिनों से नौका के यात्रियों के भोजन पदार्थ चुक गये थे। वे सब भूख से तड़प रहे थे।

पहाड़ पर चढ़ते ही उसे एक सुंदर एवं विशाल मैदान दिखाई पड़ा। उस मैदान के बीच में हरे रंग के पत्थर से निर्मित एक तोरण था। अबुल ने वहाँ पहुँचने पर एक फौलादी खंभा देखा। उस पर एक भेरी बंधी थी। तोरण से एक तांबे का तख्ता लटक रहा था। उस पर यों लिखा था—

"पुराने जमाने में सिकंदर इस प्रदेश में आया था। उसने 'शेर के मुँह' वाले बिल. के खतरे का ख्याल करके अपने सलाहकारों के परामर्श से इस भेरी का प्रबंध कराया। इस भेरी को तीन बार बजाने पर भँवर में फँसी कोई भी नौका तुरंत बाहर निकल जायगी।"

ये शब्द पढ़कर अबुल फ़वारिस तुरंत पहाड़ से उतर आया और अपने अनुचरों से ये बातें कहीं।

इसके बाद इस पर चर्चा हुई। जो व्यक्ति भेरी बजाता है, उसका पहाड़ पर से उतर कर भँवर से दूर जानेवाली नौका पर सवार होना मुश्किल है।

"नौका को बचाना बहुत ज़रूरी है। मैं फिर से भेरी के पास जाकर उसे तीन बार बजाऊँगा। नौका के साथ तुम लोग अपनी जान बचा लो। मैं इस टापू में रह जाऊँगा और कोई चारा नहीं है। मैं यह जो त्याग कर रहा हूँ, इसके बदले तुम लोग मेरा उपकार करो। वह यह कि नौका में जो माल है, उसमें से आधा माल बस्रा में रहनेवाले मेरी पत्नी और पुत्रों को दे दो! चाहे मेरा हाल जो भी हो जाय! तुम लोग इसकी चिंता न करो। पर तुम लोग मेरे परिवार का ख्याल रखो।" अबुल फ़वारिस ने अपने अनुचरों से कहा।

सभी यात्रियों ने यह शपथ खायी कि उसके कहे मुताबिक़ जरूर करेंगे। अबुल फ़वारिस ने तोरण के पास लौटकर एक लाठी से भेरी को तीन बार मारा। उसकी ध्वनि आसपास के पहाड़ों में गूंज उठी। इस आवाज़ की गूंज के समाप्त होने के पहले ही भँवर मे फँसी नौका तीर की भाँति समुद्र में घुस चली। नौका के सभी यात्रियों ने ज़ोर से चिल्लाकर अबुल फ़वारिस को विदाई दी।

कुछ दिनों बाद वह नौका बस्रा पहुँची। यात्रियों ने नौका का आधा माल अबुल फ़वारिस की पत्नी और पुत्रों को सौंप दिया। अबुल फ़वारिस के परिवार ने यह सोचकर रोना-धोना शुरू किया कि अब वह नहीं रहे।

उधर अबुल फ़वारिस उस टापू में रात को तोरण के नीचे सो गया। दूसरे दिन सुबह उठकर अपने को जीवित पाकर उसने ख़ुदा को शुक्रिया अदा किया। इसके बाद वह मैदान में टहलने लगा। मैदान के बीच काला धुआँ उठते उसे दिखाई दिया। मैदान में कई नाले बह रहे थे। उसने नौ नालों को पार किया।

वह यह सोच ही रहा था कि भूख-प्यास से तड़प-तड़पकर उसका मरना निश्चित है, तभी उसे थोड़ी दूर पर भेड़ चरते दिखाई दीं। उनको देखते ही अबुल फ़वारिस की जान में जान आ गयी। उसने सोचा कि उधर कहीं मनुष्य ज़रूर होंगे। भेड़ों की दिशा में जब वह आगे बढ़ा, तब उसने एक विचित्र प्राणी को देखा। वह एक दीर्घकाय युवक था। उसके शरीर पर एक फटा लाल रंग का कंबल था। उसके शरीर तथा सर पर कवच था।

अबुल फ़वारिस ने उस युवक का परामर्श किया। युवक ने उससे पूछा—"तुम कहाँ से आ रहे हो?"

अबुल फ़वारिस ने अपने को एक बदक़िस्मतवाला बताकर अपनी तक़लीफ़ों की सारी कहानी उसे सुनायी।

दीर्घकाय व्यक्ति ने हँसकर कहा—"तुम बदक़िस्मत नहीं हो, खुशक़िस्मतवर हो! इसी लिए शेर के मुँह से बच निकले हो। अब तुम्हें कोई डर नहीं। तुमको मैं एक गाँव में पहुँचा दूँगा।" यह कहकर उस युवक ने अबुल को रोटी और दूध खाने को दिया। (और है)

१०६. मावोरी

न्यूजीलैण्ड में मावोरी जाति के लोग कई शताब्दियों से रह रहे हैं। उनकी संख्या क़रीब एक लाख की है। एक समय उनमें और गोरे लोगों के बीच भयंकर युद्ध हुए थे। लेकिन १८४० में वे लोग ब्रिटीश साम्राज्य में शामिल होने को राजी हुए और तब से शांति के साथ जी रहे हैं। मावोरी औरतें चटाइयाँ बुनती हैं। पुरुष लकड़ी का काम करते हैं। वे लोग आज भी अपनी जाति के आचारों का पालन करते हैं। इस चित्र में अंकित लकड़ी की मूर्ति उत्तरी टापू की मावोरी सभा मण्डप के पास है। नाकों का दबाव स्वागत का चिह्न है।

Photo by P. Balaji Rao

पुरस्कृत परिचयोक्ति

कंधे और हाथों से रखा तीनों को तोल

प्रेषक : जे. एन. आचार्य, वाराणसी

Photo by P. Balaji Rao
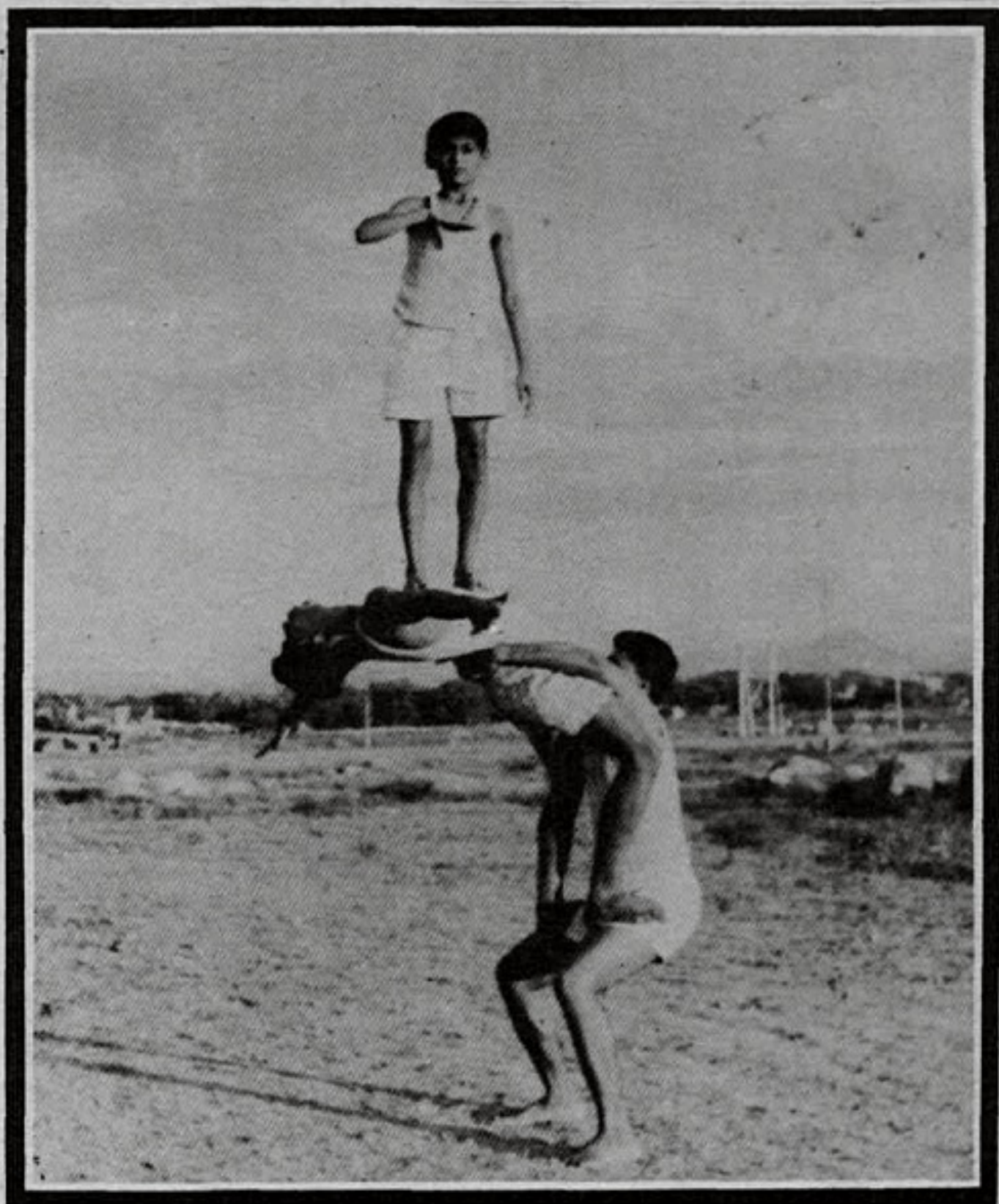
पुरस्कृत परिचयोक्ति

सीने पर खड़े दिखलाते करतब अनमोल

प्रेषक : जे. एन. आचार्य, वाराणसी

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

दिसम्बर १९७० :: पारितोषिक २०)
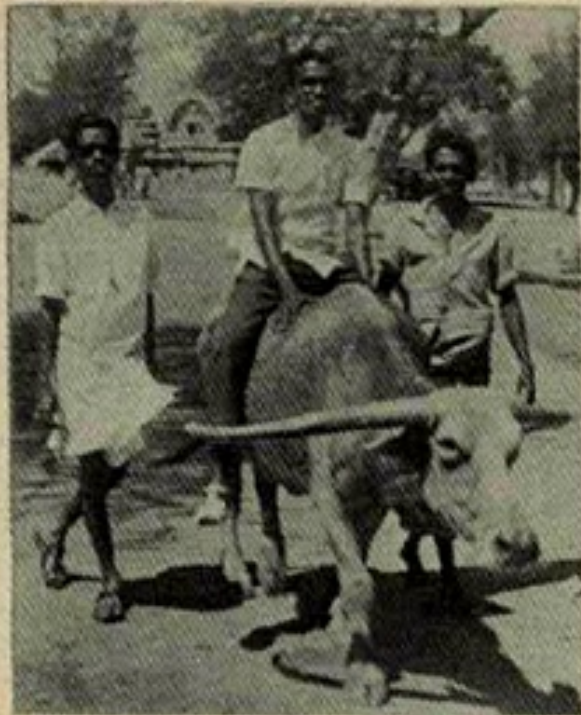
कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ १० अक्तूबर १९७० के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

अक्तूबर – प्रतियोगिता – फल

अक्तूबर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गयी हैं। इनके प्रेषक को २० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **कंधे और हाथों से रखा तीनों को तोल**

दूसरा फ़ोटो: **सीने पर खड़े दिखलाते करतब अनमोल**

प्रेषक: **जे. एन. आचार्य,**

के २२/८६ ब्रह्मघाट, वाराणसी, (उ. प्र.)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'
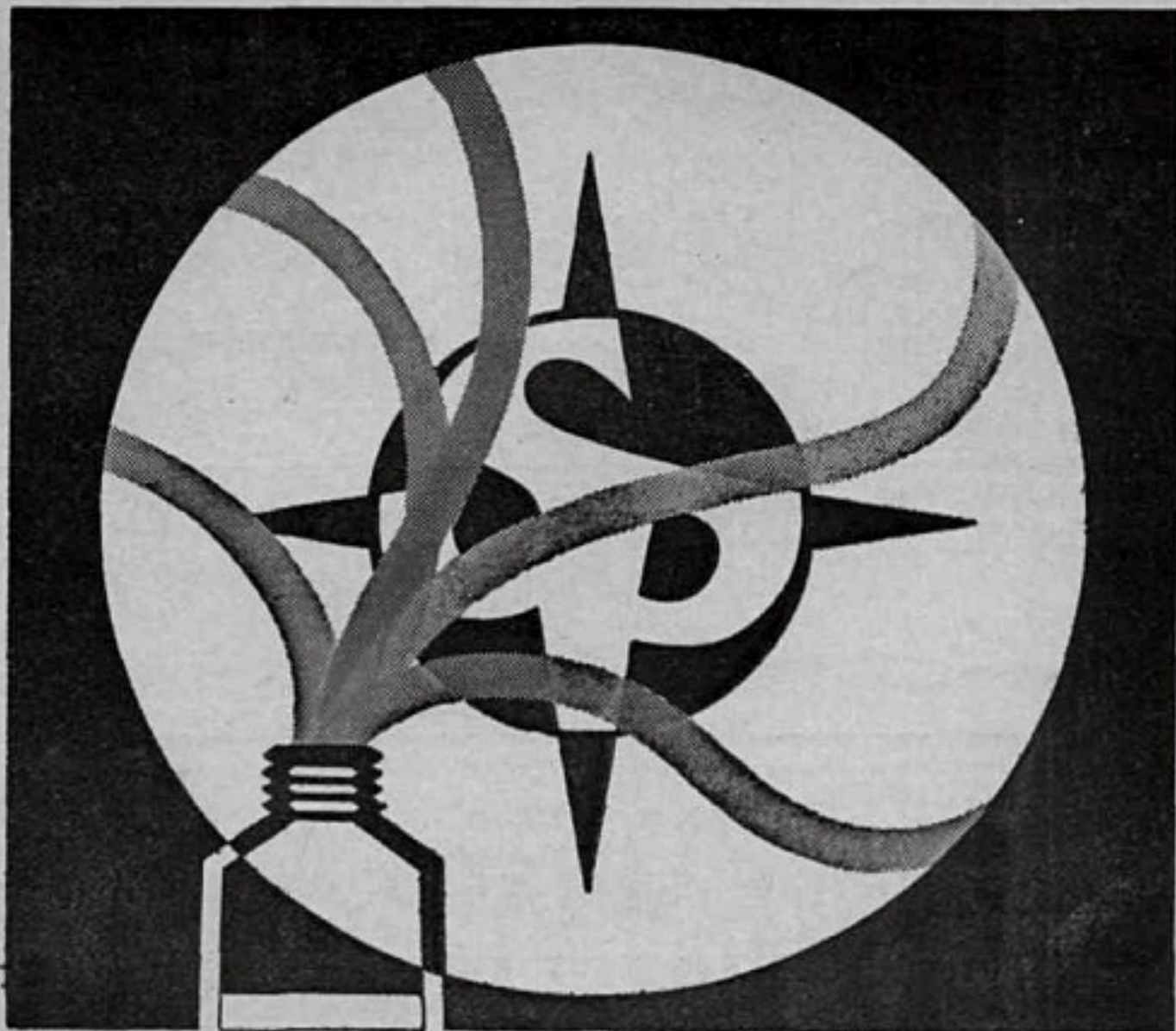
कलाकारों... विद्यार्थियों...
अपने भावचित्रों को शालीमार...

शालीमार

स्टूडेन्ट्स ऑयल एन्ड वाटर कलर्स
आर्टिस्ट्स ऑयल, वाटर एन्ड पोस्टर कलर्स से
रेखांकित करो
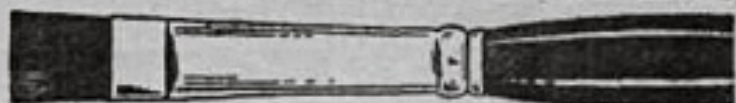
....कक्षा में विद्यार्थी और चित्रशाला में निपुण चित्रकार दोनों के लिए।
....जब सोचा हुआ चित्र केवल दिमाग में है, जब रंग केवल कल्पना में हैं तब आपको अपनी कल्पना के अनुरूप काम करने के लिए हमारी सनसनी पैदा करनेवाली रंग-माला की ज़रूरत पड़ती है।
शालीमार स्टूडेन्ट्स ऑयल एन्ड वाटर कलर्स
शालीमार आर्टिस्ट्स ऑयल, वाटर एन्ड पोस्टर कलर्स
के पीछे १८ वर्षों का अनुभव है

शालीमार पेन्ट्स लि.
कोर्टॉल्ड्स (यू.के.) ग्रुप ऑफ कम्पनीज़ के सदस्य

विक्रय प्रतिनिधि: ■आडवानी प्राइवेट लि., कलकत्ता-१ ■एम. जी. शाहानी एन्ड कं. (दिल्ली) प्राइवेट लि., नयी दिल्ली-१ ■स्वान-शाहानी कार्पोरेशन, बम्बई-१